ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, ओड़िया, तेलुगू, कन्नड़, अंग्रेजी, सिंधी, सिंधी (देवनागरी) व बंगाली भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : २१ अंक : ०९
भाषा : हिन्दी (निरंतर अंक : २३१)
१ मार्च २०१२ मूल्य : रु. ६-००
फाल्गुन-चैत्र वि.सं. २०६८-६९

स्वामी : संत श्री आशारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : संत श्री आशारामजी आश्रम, मोटेरा, संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद -३८०००५ (गुजरात).
मुद्रण स्थल : हरि ॐ प्रिंटर्स (ए यूनिट ऑफ आकाश फाउंडेशन), c/o संत श्री आशारामजी आश्रम, खंडवा रोड, बिलावली तालाब के पास, इन्दौर-४५२००१. म.प्र.
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाकखर्च सहित)

भारत में

अवधि	हिन्दी व अन्य भाषाएँ	अंग्रेजी भाषा
वार्षिक	रु. ६०/-	रु. ७०/-
द्विवार्षिक	रु. १००/-	रु. १३५/-
पंचवार्षिक	रु. २२५/-	रु. ३२५/-
आजीवन	रु. ५००/-	----

विदेशों में (सभी भाषाएँ)

अवधि	सार्क देश	अन्य देश
वार्षिक	रु. ३००/-	US $ 20
द्विवार्षिक	रु. ६००/-	US $ 40
पंचवार्षिक	रु. १५००/-	US $ 80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता : 'ऋषि प्रसाद', संत श्री आशारामजी आश्रम, संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुज.).
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org
: www.rishiprasad.org

इस अंक में...

साधकों की सेवा का प्रेरक पर्व : अवतरण दिवस

(पूज्य बापूजी का ७२वाँ अवतरण दिवस : ११ अप्रैल)

(पूज्य बापूजी की ज्ञानमयी अमृतवाणी)

जीवन के जितने वर्ष पूरे हुए, उनमें जो भी ज्ञान, शांति, भक्ति थी, आनेवाले वर्ष में हम उससे भी ज्यादा भगवान की तरफ, समता की तरफ, आत्मवैभव की तरफ बढ़ें इसलिए जन्मदिवस मनाया जाता है ।

'जन्म' किसको बोलते हैं ? जो अव्यक्त है, छुपा हुआ है वह प्रकट हुआ इसको 'जन्म' बोलते हैं । और 'अवतरण' किसको बोलते हैं ? जो ऊपर से नीचे आये । जैसे राष्ट्रपति अपने पद से नीचे आये और स्टेनोग्राफर को मददरूप हो जाय, उनके साथ मिलकर काम करे-कराये इसको बोलते हैं 'अवतरण' । अवतरण, जन्म, प्राकट्य इन सबकी अपनी-अपनी व्याख्या है परंतु हमको क्या फायदा ? हम यह व्याख्या समझेंगे, विचारेंगे तो हम अपने कर्म-बंधन से, देह के अहं से, दुःख के साथ तादात्म्य से और सुख के भ्रम से पार हो जायेंगे ।

भगवान की जयंती, महापुरुषों का अवतरण दिवस अथवा अपना शास्त्रीय ढंग से मनाया गया जन्मदिवस एक लौकिक कर्म दिखते हुए भी इसके पीछे आधिदैविक उन्नति छुपी है । और किन्हीं संत-महात्मा की हाजिरी में यह होता है तो आध्यात्मिक उन्नति का प्राकट्य होता है ।

कुछ लोग केक काटते हैं, मोमबत्तियाँ फूँकते हैं और फूँक के द्वारा लाखों-लाखों जीवाणु थूकते हैं, 'हैप्पी बर्थ डे, हैप्पी बर्थ डे...' करते हैं । यह जन्मदिवस मनाने का पाश्चात्य तरीका है लेकिन हमारी भारतीय संस्कृति में इस तरीके को अस्वीकार कर दिया गया है । हमारा जीवन अंधकार में से प्रकाश की ओर जाने के लिए है । अंधकारमयी कई योनियों से हम भटकते हुए आये, अब आत्मप्रकाश में जियें । **तमसो मा ज्योतिर्गमय** - हम अंधकार से प्रकाश की तरफ जायें । वे जो मोमबत्तियाँ, दीये जले होते हैं, उन्हें फूँकते-फूँकते बुझाकर प्रकाश को अंधकार में परिवर्तित करना तथा बासी अन्न (केक) का काट-कूट करना और फिर बाँटना... छी-छी ! अगर बुद्धिमत्ता हो तो केक खानेवाले को देखकर वमन आ जाय । क्योंकि जो फूँकता है न, फूँक में लाखों-लाखों जीवाणु थूकता है । ऐसा भी लोग जन्मदिवस मनाते हैं । खैर अब सत्संग द्वारा जागृति आने से उस अंध-परम्परा में कमी हुई है, सजगता आयी है लेकिन अभी भी कहीं-कहीं मनाते हैं ।

जन्मदिवस मनाने के पीछे उद्देश्य होना चाहिए कि आज तक के जीवन में जो हमने अपने तन के द्वारा सेवाकार्य किया, मन के द्वारा सुमिरन किया और बुद्धि के द्वारा ज्ञान-प्रकाश पाया, अगले साल अपने ज्ञान में परमात्म-तत्त्व के प्रकाश को हम और भी बढ़ायेंगे, सेवा की व्यापकता को बढ़ायेंगे और भगवत्प्रीति को बढ़ायेंगे । ये तीन चीजें हो गयीं तो आपको उन्नत बनाने में आपका यह जन्मदिवस बड़ी सहायता करेगा । परंतु किसीका जन्मदिवस है और झूम बराबर झूम शराबी... पेग पिये और क्लबों में गये तो यह सत्यानाश दिवस साबित हो जाता है ।

शरीर आधिभौतिक है, मन, बुद्धि, अहं आधिदैविक हैं और अध्यात्म-तत्त्व इन दोनों से परे है, उनको जाननेवाला है । भगवान श्रीकृष्ण कृपा करके अपना अनुभव बताते हैं :

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः ।

(गीता : ४.९)

अर्जुन ! मेरा जन्म और कर्म दिव्य हैं ऐसा

जो जानता है उसके भी जन्म और कर्म दिव्य हो जाते हैं और वह मुझे मिलता है, ऐसे मिलता है जैसे दो सरोवर के बीच की पाल टूट जाय तो कौन-से सरोवर का कौन-सा पानी यह पृथक् करना सम्भव नहीं रहता। ऐसे ही जीव का जीवत्व छूट जाय और ईश्वर का अपना ईश्वरत्व बाधित हो जाय तो वास्तव में दोनों में एक परब्रह्म परमात्मा लहरा रहा था, लहरा रहा है, लहराता रहेगा।

जीव जो अव्यक्त है, अप्रकट है वह प्रकट होता है तो उसका जन्म होता है और प्रकटी हुई चीज फिर विसर्जित होती है, होने को जाती है तो वह मृत्यु होता है। जैसे शरीर मर गया तो इसको श्मशान में जलाने को ले जायेंगे तो जलीय अंश जल में चला जायेगा, वायु का अंश वायु में, अग्नि का अंश अग्नि में, पृथ्वी तत्त्व का अंश कुछ राख, हड्डियाँ बच जायेंगी तो वह अव्यक्त हो गया। मृत्यु हो गयी और कहीं फिर जन्म हुआ, व्यक्त हुआ तो जन्म। तो अव्यक्त होना विसर्जित होना इसको मृत्यु कहा और विसर्जित में सुसर्जित होना इसको जन्म कहा। ये जन्म और मृत्यु की परम्परा है। तो

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥

'हे अर्जुन ! मेरे जन्म और कर्म दिव्य अर्थात् निर्मल और अलौकिक हैं - इस प्रकार जो मनुष्य तत्त्व से जान लेता है, वह शरीर को त्यागकर फिर जन्म को प्राप्त नहीं होता, किंतु मुझे ही प्राप्त होता है।' **(गीता : ४.९)**

तो भगवान का जन्म होता है करुणा-परवश होकर, दयालुता से। भगवान करुणा करके आते हैं तो यह भगवान का जन्म दिव्य हो गया, अवतरण हो गया। हमारे कष्ट मिटाने के लिए भगवान का जो भी प्रेमावतार, ज्ञानावतार अथवा मर्यादावतार आदि होता है, तब वे हमारे नाईं जीते हैं, हँसते-रोते हैं, खाते-खिलाते हैं, सब करते हुए भी सम रहते हैं तो हमको उन्नत करने के लिए। उन्नत करने के लिए जो होता है वह अवतार होता है। ❐

विश्व-मानव को एक नयी दिशा देने की ओर : प्रेरणा सभा

भारत के संत-महापुरुष ऐसी महान परम्पराओं के संवाहक हैं, निर्माता हैं जिनके बल पर भारत आज भी अन्य देशों की तुलना में सुख-शांति, सौहार्द में सबसे आगे है। आज विदेश के लोगों को भी भारत के ऋषि-मुनियों, ब्रह्मनिष्ठ महापुरुषों की देन - योग, आत्मिक ज्ञान और ध्यान से आनंद, उत्साह और शांति मिल रही है। परंतु इसके विपरीत पाश्चात्य कुचक्र से प्रभावित होकर युवान-युवतियाँ व समाज उनके अंधानुकरण में बहता जा रहा है। विद्यार्थियों व युवकों को कमजोर करने के लिए **वेलेन्टाईन डे** और विदेशी त्यौहारों की अंधाधुंध दौड़ साफ दिख रही है। समाज इसमें न फँसे इस हेतु **१४ फरवरी** को वेलेन्टाईन डे के स्थान पर **'मातृ-पितृ पूजन दिवस'** मनाने का अभियान पिछले छः वर्षों से पूज्य संत श्री आशारामजी बापू की प्रेरणा से चलाया जा रहा है। इस वर्ष पूरे विश्व को 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' की प्रेरणा देने हेतु ७ फरवरी को रामलीला मैदान, नोयडा (उ.प्र.) में 'प्रेरणा सभा' का आयोजन किया गया, जिसमें विभिन्न संत-महात्माओं ने अपने ओजस्वी-तेजस्वी विचारों द्वारा समाज का उद्बोधन किया :

महामंडलेश्वर स्वामी परमात्मानंदजी महाराज : परम पूज्य, परम श्रद्धेय, युगशक्ति, विश्व की महान विभूति सद्गुरुदेव बापू आशारामजी के चरणों में मैं नमन करता हूँ। मैं हृदय की, अंतरात्मा की जो श्रद्धा है उसको व्यक्त कर रहा हूँ :

मेहनती हो तो चींटी जैसा, विशाल हो तो आकाश जैसा, गहरा हो तो सागर जैसा, ऊँचा हो तो हिमालय जैसा, परमहंस हो तो सनकादि

जैसा और संत हो तो बापू आशारामजी जैसा ।

महाराजश्री ने मातृ-पितृ पूजन का विधान रखा है । उन्होंने वासना को कहाँ लाकर के स्थापित किया है ! एक अविवाहित लड़की किसी लड़के के साथ जब कोई दिन मनाती है तो यह ठीक नहीं है, हमारे भारतवर्ष के लिए कलंक है । मैं आज महाराजश्री बापूजी का इस बात के लिए अभिनंदन करता हूँ । उन्होंने हमारे इस राष्ट्रीय कलंक को दूर करने के लिए एक नये विधान का सृजन किया है और वह है 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' । याद रखना एक लड़की लड़के के साथ जब कोई दिन मनाती है तो यह 'वासना' है । जब वही लड़का-लड़की माँ-बाप के चरणों में झुकते हैं तो यह 'उपासना' है । महाराजजी ने युवावर्ग को वासना से बचाकर उनके लिए उपासना का मार्ग खोल दिया है ।

महामंडलेश्वर स्वामी देवेन्द्रानंदजी गिरि, राष्ट्रीय महामंत्री, अखिल भारतीय संत समिति : सच्चा प्रेम यदि दिल में हो तो वह पत्थर को भी भगवान बना देता है और उस प्रेम के साथ यदि गुरु हों तो क्या कहना ! बापूजी !

आपके प्रेम से पत्थर को भी पिघलते देखा ।
हजारों बिगड़े हुओं के नसीब बदलते देखा ।।
जिनको भी आपने दिया सहारा ।
उसे मरते-मरते भी जीते देखा ।।

अधिक नहीं, मैं इतना ही कहता हूँ बापूजी के लिए कि

आपके गुणों को क्या कहें,
आप गुणों के समुंदर हो ।
नूरानी निगाहों से मौत को भी
जिंदगी देनेवाले धुरंधर हो ।।

जिस तरह से यह आयोजन किया जा रहा है, मुझे पूरा विश्वास है कि बापूजी हमें एक नयी दिशा दिखा रहे हैं ।

श्री कल्कि पीठाधीश्वर आचार्य स्वामी प्रमोद कृष्णम्जी महाराज, अध्यक्ष, उत्तर भारत, अखिल भारतीय संत समिति : हम जानते हैं कि यदि संत पैदा नहीं होंगे तो धर्म का प्रचार, धर्म का गुणगान और धर्म की रक्षा कौन करेगा ? लेकिन कितने लोग हैं जो चाहते हैं कि मेरे घर में संत पैदा हों, मेरे घर में भगतसिंह पैदा हों ? यह बात कड़वी है । हम यह तो चाहते हैं कि भगतसिंह पैदा होना चाहिए, साधु पैदा होना चाहिए, राष्ट्र में संत होने चाहिए परंतु ये सभी दूसरों के घर पैदा होने चाहिए, मेरे घर में तो राजा पैदा होना चाहिए । अगर यह सिलसिला चलता रहा, हम लोगों ने अपने बच्चों को मार्केटियर बनाना बंद नहीं किया तो एक दिन बहुत बड़ा प्रश्नचिह्न लग जायेगा और वह दिन दूर नहीं है जब माता-पिता, भाई-बहन के संबंध, संस्कार ढूँढ़ने से भी हमें कहीं नजर नहीं आयेंगे ।
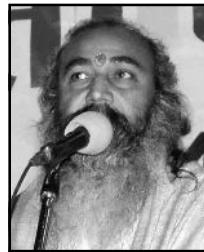
मैं बापूजी के किसी शिविर में आज तक सहभागी नहीं हुआ हूँ । मैंने बापूजी का दर्शन भी आज पहली बार किया है । हे बापू ! हम आपसे रूबरू आज हुए हैं लेकिन आपके नाम की प्रीत हमारे दिल में पहले से ही धड़क रही थी । आप जो इशारा कर रहे हैं यह तो बड़ा पुनीत है । हमारे यहाँ तो कहा गया है :

त्वमेव माता च पिता त्वमेव...

भगवान की स्तुति... तू ही माँ है, तू ही पिता है और संत कबीरजी तो एक कदम आगे निकल गये । उन्होंने कहा है :

हरि जननी मैं बालक तेरा । काहे न अवगुन बकशहु मेरा ।।
सुत अपराध करे दिन केते । जननी के चित रहे न तेते ।।

'हे भगवान ! तू मेरी माँ है, मैं तेरा बालक हूँ । तू मेरे अवगुण क्यों नहीं बख्श देता ? पुत्र तो बहुत-से अपराध करता है किंतु माँ के मन में वे बातें नहीं रहतीं ।'

बापूजी ! यह जो आपने पुनीत शुरुआत की

है, यह आपके लिए नहीं है, यह इन संतों के लिए नहीं है, यह इस राष्ट्र के होनेवाले भविष्य के लिए संदेश है । इसलिए हम तहेदिल से आपका समर्थन, आपका सहयोग और हृदय से वंदन करते हैं । आपके इस ध्येय को नमन करते हैं ।

संत श्री देवकीनंदन ठाकुरजी महाराज :

आज भी हमारा भारत विश्वगुरु इसलिए है क्योंकि आज तक हमारे संस्कारों की, हमारी सभ्यता की थाह को पूरे विश्व में कोई पा नहीं सका और न पा सकेगा ।

बापूजी के यहाँ से जो ज्योति जगायी जा रही है कि 'वेलेंटाईन डे' के स्थान पर हम लोग 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' मनायें तो यह एक महाकुम्भ बनकर हमारे घर में हमेशा-हमेशा के लिए विराजमान हो जायेगा ।

हम लोग १४ तारीख को माता-पिता के पूजन की प्रेरणा पूज्य बापूजी से लेकर जा रहे हैं, जीवन भर इसे करें और करते रहें । हम भी करेंगे और आनेवाली पीढ़ी भी करेगी और यह पीढ़ी आनेवाली पीढ़ी को यह भी बतायेगी कि यह बात हमने कहाँ से सीखी ।

आचार्य युवा लोकेश मुनिश्रीजी, अहिंसा विश्व भारती, जैन समाज : आज के इस महान अवसर पर संत आशारामजी बापू का मैं इस बात के लिए अभिनंदन करता हूँ कि भारतीय संस्कृति की सुरक्षा एवं संरक्षण के लिए एक महान बीड़ा उठाते हुए उन्होंने आह्वान किया है कि 'वेलेंटाईन डे' को हम भारतीय संस्कृति के अनुरूप 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' के रूप में मनायें । मौजूदा समय में अगर सबसे बड़ा कोई संकट है तो वह है सांस्कृतिक मूल्यों का संकट । एक युग था जिसमें हर कस्बे के अंदर एक-आध सिनेमा हॉल मिलता था । आज हर घर के बेडरूम जो हैं, सिनेमा हॉल का रूप धारण कर चुके हैं । ऐसे समय में अगर हमें अपनी भारतीय संस्कृति की सुरक्षा करनी है तो पूज्य बापूजी जैसे महान संतों से ही हो सकती है । जैसा नाम है 'संत श्री आशारामजी बापू', ये समस्त विश्व के लिए आशा की किरण हैं ।

बापूजी ! आपने जो आह्वान किया है १४ फरवरी का, उभयपक्षी आह्वान है । एक ओर हमें अपनी भावी पीढ़ी को संस्कृति से परिचित कराना है तो दूसरी ओर अभिभावकों को भी अपने दायित्व और कर्तव्य के प्रति जागरूक करना है ।

बापूजी के आह्वान से नोयडा के इस रामलीला मैदान से जो आवाज उठी है, यह समूचे हिंदुस्तान के अंदर नये इतिहास का सृजन करेगी । विश्वभारती की ओर से, जैन समाज की ओर से मैं आपको न केवल आश्वासन देता हूँ बल्कि मैं अपना यह संकल्प भी व्यक्त करता हूँ कि इस कार्य के लिए आनेवाले समय के अंदर पूरा समाँ नियोजित करेंगे और इस दिशा में नये मुकामों को हासिल करेंगे ।

स्वामी श्री गंगादासजी, उपाध्यक्ष, विरक्त वैष्णव मंडल, पंजाब साधु समाज : हमारे बापूजी का पूरे विश्व को सुखमय, आनंदमय, मंगलमय बनाने के लिए अवतार हुआ है । संत स्वयं परमात्मा के स्वरूप हैं इसलिए मैं सबको बहुत-बहुत बधाई देता हूँ और यही कामना करता हूँ कि जब हम सभी मिलकर बापूजी के आह्वान को अपने जीवन में उतार लेंगे तो सारा राष्ट्र बदल जायेगा ।

भाई चमनजीत सिंहजी : संत प्रभु के साथ हमको मिलाने के लिए आते हैं और हमारे जी को एक दान देते हैं । कोई दान करता है धन का, कोई वस्त्रों का, कोई सोना-चाँदी, कोई भूमि का

परंतु संत दान देते हैं प्रभुभक्ति का ।

कितने जन्म हमने पाये हैं यह गिनती से बाहर है, अब एक जन्म तो अपने सद्गुरु को दे दें कि तेरा सुमिरन करेंगे, तेरे वचनों का पालन करेंगे ।

युवा क्रांतिद्रष्टा संत दिनेश भारतीजी (जिन्होंने अमरनाथ श्राइन बोर्ड के जनांदोलन में मुख्य भूमिका निभायी थी) :

हे भारतवासियो ! भेजो अपने नौजवानों को बापूजी के 'ध्यान-योग शिविरों' में, भेजो अपने बच्चों को बापूजी के 'बाल संस्कार केन्द्रों' में ताकि भारत माँ को अखंडता का सिंहासन प्राप्त हो सके ।

गाँव-गाँव, गली-गली में मातृ-पितृ पूजन होगा । भारतीय संस्कृति की इस उज्ज्वलता को हम पूरे विश्व के सामने प्रस्तुत करेंगे ।

डॉ. आचार्य रामगोपाल शुक्ल, प्रबंध निदेशक, वरदान टी.वी. चैनल : हम सब लोग माता-पिता को प्रणाम करें, उनका चरणस्पर्श करें । साधु-संतों की छाया में, बापूजी की छाया में यह देश आगे बढ़ा है । सोचना केवल यह है कि एक गुलाब का फूल लेकर प्रेम के नाम पर वासना-विकारों का अभिवादन क्या करना ! यहाँ तो भारतीय संस्कृति कहती है :

तुझमें राम मुझमें राम, सबमें राम समाया है ।
कर लो सभीसे प्यार जगत में, कोई नहीं पराया है ।।

इसलिए आप उस प्रेम को स्वाध्याय में लगायें, संस्कार में लगायें और बापूजी के चरणों में समर्पित कर दें, जहाँ से आपको आशीर्वाद भी मिलेगा और ज्ञान की गंगा भी प्रवाहित होगी, अज्ञान का अंधकार हट जायेगा । हर वर्ष १४ फरवरी को हम सब मिलकर माता-पिता का पूजन करें और उनके साथ-साथ गुरुजनों का भी पूजन करें ।

स्वामी घनश्यामानंदजी, अध्यक्ष, वैदिक डिवाइन एसोसिएशन : एक पाश्चात्य विद्वान ने कहा था : 'यदि पैसा खो गया तो समझो कुछ नहीं खोया । यदि सेहत खो गयी तो समझो कुछ-कुछ खोया परंतु जीवन में चरित्र खो दिया तो तुमने सब कुछ खो दिया ।' लेकिन उस पश्चिमी देश के विद्वान को यह पता नहीं था कि भारत में बापूजी रहते हैं । मैं उस विद्वान से कहता हूँ, यदि किसी व्यक्ति का चरित्र भी खो जाय और वह पूज्य बापूजी की शरण ग्रहण करे तो बापूजी उसको चरित्रवान बना देंगे ।

डॉ. भीष्मनारायण सिंह, ७ राज्यों के पूर्व राज्यपाल, पूर्व केन्द्रीय मंत्री, सुप्रसिद्ध गांधीवादी : तीन माँ तो आप कभी नहीं भूलना । पहली तो अपनी माँ को, उसके बिना तुम्हारा अस्तित्व कहाँ रहता ! दूसरी अपनी मातृभाषा को भी नहीं भूलना और तीसरी माँ है मातृभूमि ।

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।

ये तीन बातें गांधीजी भी कहते थे ।

डॉ. अजयप्रकाश मिश्रा, अध्यक्ष, भारत-अमेरिका मैत्री संगठन : हमारी संस्कृति पर किसी भी प्रकार का जो आघात होता है, उसे रोकने में यह संत-समाज आज से नहीं प्रारम्भ से ही सक्षम रहा है । जब सिकंदर ने यहाँ पर पोरस को जीता तो उस समय भी जब वह यहाँ राज नहीं कर पाया, तब उसके सेनापति सेल्यूकस ने इस पर अध्ययन किया तो पता लगा कि यहाँ पर संत-समाज है, जो अध्यापन करता है, उसने इस समाज को जोड़ रखा है और यहाँ पर वह किसी विदेशी की दाल नहीं गलने देता है ।

प्रेरणा सभा के अध्यक्ष विश्ववंदनीय पूज्य संत श्री आशारामजी बापू :

नारायण-नारायण... मेरे हृदय की व्यथा यह थी कि लोग बोलते हैं, 'विकास का युग, विकास का युग' लेकिन यह आज के युवक-युवती के लिए विनाश का युग है; ऐसा युग भूतकाल में कभी नहीं आया। न शुद्ध दूध मिलता है, न शुद्ध घी मिलता है, न शुद्ध हवाएँ मिलती हैं, न शुद्ध संस्कार मिलते हैं। थोड़ा-बहुत, थोड़ा कुछ यौवन आया नहीं कि कुसंस्कारों के द्वारा उनकी कमर टूट जाती है। मैं किसीका विरोध नहीं करना चाहता हूँ लेकिन मानवता का विनाश देखकर मेरा हृदय व्यथित होता है। हमारे देश के युवक-युवतियाँ और विदेश के भी, एक-दूसरे को फूल देकर, एक-दूसरे के प्रति कामभाव से देखकर नष्ट-भ्रष्ट हो रहे हैं - इससे मेरा हृदय व्यथित होता था। इसलिए मैंने पिछले छः वर्षों से अपने स्तर पर कोशिश की। अब इन सभी संत-महात्माओं की कोशिश से विश्व इस नागपाश से छूटे, ऐसी आशाराम की आशा है।

बच्चा जब माँ का आदर करता है या पिता का आदर करता है तो विश्वपिता उसके हृदय में छलके बिना नहीं रहता।

यह बाहर की आँधी आयी है। हम इसका विरोध नहीं करते हैं। बाहर की आँधी को हम थोड़ी दिशा दे देते हैं ताकि यहाँ की दिशा से उन लोगों का भी मंगल हो। प्रेमदिवस मनायें लेकिन **'मातृदेवो भव। पितृदेवो भव।'** करके। अपने हृदय को विकारी वासनाओं का जामा, प्रेम को बदनाम करता है। प्रेम और काम में बहुत अंतर है।

जहाँ राम तहँ नहीं काम, जहाँ काम तहँ नहीं राम।
तुलसी दोनों रह न सकें, रवि रजनी इक ठाम॥

काम नीचे के केन्द्रों में है। वह उत्तेजना और अंधापन पैदा करता है, विकार पैदा करता है और प्रेम ऊपर के केन्द्रों में है, वह सूझ-बूझ पैदा करता है, नित्य नवीन रस पैदा करता है, प्राणिमात्र में अपनत्व दिखाता है।

कामुक लोगों द्वारा फूल देकर प्रेम दिखाया जाता है और वे लोग तो कैसे-कैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं, मेरे पास वे गंदे शब्द नहीं हैं। यह तो आदमी को विनाश की तरफ ले जाता है। पूरा मानव-समाज... केवल हिंदुस्तान उन्नत हो ऐसा नहीं अपितु पूरा विश्व इस काम-वासना की अंधी आँधी से बचकर संयमी, सदाचारी, स्वस्थ, सुखी व सम्मानित जीवन की राह पर चले और विश्व का मंगल हो क्योंकि हमें विरासत में वही मिला है।

सर्वे भवन्तु सुखिनः... हम किसीका विरोध नहीं करते हैं परंतु कोई बेचारा राह भूला है, हमारा भाई है, फूल देकर पड़ोस की बहन को बहन कहने की लायकात नष्ट कर रहा है और बहन फूल लेकर पड़ोस के भाई की नजर से गिरकर विकारी कठपुतली बन रही है तो ऐसी बेटियों को, बेटों को सही दिशा मिले।

एक तो उनसे अन्याय हो रहा है... ठीक से पौष्टिक खुराक नहीं है, शुद्ध घी नहीं है, दूध नहीं है, अच्छा वातावरण नहीं है। थोड़ा-बहुत, हल्का-फुल्का यौवन आया-न आया, उससे पहले ही एक-दूसरे को फूल देकर यौवन के रस को निचोड़ के नीचे की नालियों से गिरा देने के हलके संस्कार उन्हें मिल रहे हैं। फिर बच्चे की माँ आती है कि 'आठवीं तक तो अच्छे अंक आते थे लेकिन अब बाबा ! यह पढ़ता नहीं है, यह पास नहीं हो रही है।' माँ-बाप दुःखी हैं। उन्हें दुःखी देखकर मेरा हृदय दुःखी होता है। बच्चों के गाल दबे हुए देखकर मेरा दिल दबता है। बच्चों की स्मृति दबी हुई देखकर मेरे चित्त में हुआ कि कुछ करें-कुछ करें... ऐसा सोचते-सोचते क्या करें, विरोध तो हमारा विषय नहीं है परंतु हमारे गुरुदेव से प्राप्त संस्कारों का प्रचार तो हमारा विषय है, हमने कहा चलो, 'यह छोड़ दो, यह छोड़ दो'

नहीं, अच्छा करो तो बुरा छूट जाय।

मिट्टी का खिलौना बच्चा चूस रहा है... माँ ने कहा, 'छोड़ दे, नहीं तो हाथ तोड़ दूँगी।' बच्चे ने दब के, डर के छोड़ दिया और माँ इधर-उधर गयी तो फिर से उठाया। लेकिन दूसरी सयानी माँ ने क्या किया ? असली आम पकड़ा दिया, 'मेरे लाल ! यह आम है किंतु खिलौने का है। मिट्टी बीमारी देगी, तू यह ले असली आम !'

बच्चे को आम का जरा-सा रस आया तो आम घोलना भी सीख गया, चूसना भी सीख गया। ऐसे ही 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' से बच्चों में सच्ची प्रीति आयेगी, सच्ची सज्जनता आयेगी और माँ-बाप का शुभ संकल्प प्राप्त होगा तो बच्चे विकारों से, काम से बचेंगे, अच्छी पढ़ाई करेंगे। (卐) फिर शादी-विवाह होगा तो संयम से संतान को जन्म देंगे। भगवान कहते हैं :

धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि... (गीता : ७.११)

'मैं सब भूतों में धर्म के अनुकूल अर्थात् शास्त्र के अनुकूल काम हूँ।'

धर्म से अविरुद्ध जो काम है, वह तो मेरा स्वरूप है, उसीसे सृष्टि चलती है। लेकिन शादी-विवाह के पहले, पढ़ाई के समय ही एक-दूसरे को फूल देकर युवक-युवतियाँ अपनी तबाही कर रहे हैं तो मुझे उनकी तबाही देखकर पीड़ा होती है। मानव-समाज को कहीं घाटा होता है तो मेरा दिल द्रवित हो जाता है। **- पूज्य बापूजी के हृदयोद्गार**

आचार्य देवप्रकाश देवश्रीजी : बापूजी के दिल की जो पीड़ा है, अब केवल बापूजी की नहीं है, वह हम सबके दिल की पीड़ा है। क्योंकि यह व्यक्तिगत नहीं है बल्कि यह पूरे देश के लिए है, समाज के लिए है, संसार के लिए है, हमारे आज के लिए है और सुरक्षित कल के लिए है। अगर इस पीड़ा को नहीं समझा गया तो देश के लिए बड़ी मुश्किल हो जायेगी। हमारी युवा पीढ़ी का भविष्य अंधकार में गिर जायेगा। मैं तो बस बापूजी के चरणों में इतना ही कहना चाहता हूँ कि मेरे जो नौ लाख अनुयायीगण हैं, आप जब, जैसे, जहाँ आवाज देंगे, आपकी सेवा में, राष्ट्र की सेवा में वे आपके सम्मुख खड़े होंगे। धर्म के परिवर्धन के लिए, धर्म के उत्थान के लिए हम सबको मिलकर कार्य करना होगा।

पूज्य बापूजी का युवा पीढ़ी के लिए पावन संदेश

तू गुलाब होकर महक, तुझे जमाना जाने।

विषय-विकारों की आँधी में न बहकर संयम-सदाचार से युक्त, स्वस्थ, सुखी एवं सम्मानित जीवन जियो। अपने लिए, माता-पिता के लिए खुशहालियाँ पैदा करनेवाली सद्भावना से, संयम से आपका मंगल हो और आपसे मिलनेवाले का भी आनंद-मंगल हो। ❐

(卐) माता-पिता के पूजन से अच्छी पढ़ाई का क्या संबंध ? ऐसा सोचनेवालों को अमेरिका की 'यूनिवर्सिटी ऑफ पेंसिल्वेनिया' के सर्जन व क्लिनिकल असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ. सू किम और 'चिल्ड्रेन्स हॉस्पिटल ऑफ फिलाडेल्फिया, पेंसिल्वेनिया' के एटर्नी एवं इमिग्रेशन स्पेशलिस्ट जेन किम के शोधपत्र के निष्कर्ष पर ध्यान देना चाहिए। अमेरिका में एशियन मूल के विद्यार्थी क्यों पढ़ाई में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करते हैं ? इस विषय पर शोध करते हुए उन्होंने यह पाया कि वे अपने बड़ों का आदर करते हैं और माता-पिता की आज्ञा का पालन करते हैं तथा उज्ज्वल भविष्य-निर्माण के लिए गम्भीरता से श्रेष्ठ परिणाम पाने के लिए अध्ययन करते हैं। भारतीय संस्कृति के शास्त्रों और संतों में श्रद्धा न रखनेवालों को भी अब उनकी इस बात को स्वीकार करके पाश्चात्य विद्यार्थियों को सिखाना पड़ता है कि माता-पिता का आदर करनेवाले विद्यार्थी पढ़ाई में श्रेष्ठ परिणाम पा सकते हैं।

जो विद्यार्थी माता-पिता का आदर करेंगे वे 'वेलेंटाईन डे' मनाकर अपना चरित्र भ्रष्ट नहीं कर सकते। संयम से उनके ब्रह्मचर्य की रक्षा होने से उनकी बुद्धिशक्ति विकसित होगी, जिससे उनकी पढ़ाई के परिणाम अच्छे आयेंगे।

परहित में छुपा स्वहित

(पूज्य बापूजी की परम हितकारी अमृतवाणी)

आपके जीवन में देखो कि आप बहू हो तो सासु के काम आती हो कि नहीं ? देरानी हो तो जेठानी के और जेठानी हो तो देरानी के काम आती हो ? पड़ोसी हो तो पड़ोस के काम आती हो ? आप ईश्वर के काम आते हो ? समाज में किसीके काम आते हो ? आपके द्वारा किसीका मंगल होता है कि नहीं होता ? रोज देखो कि आप किसके-किसके काम आये और किसका-किसका मंगल हुआ ? जितना-जितना आप दूसरे के काम आयेंगे, दूसरे के मंगल में आप हाथ बँटायेंगे उतना ही घूम-फिर के आपका मंगल होगा। सब स्वस्थ रहेंगे और सब ठीक खायेंगे तो आपको भी तो खाना मिलेगा। सब प्रसन्न रहेंगे तो आपको भी तो प्रसन्नता मिलेगी। 'सब भाड़ में जायें और मैं-मैं-मैं...' तो फिर मैं...मैं... बैं...बैं... बकरा, भेड़ बनना पड़ेगा।

अपने दुःख में रोनेवाले ! मुस्कराना सीख ले।
दूसरों के दुःख-दर्द में, तू काम आना सीख ले॥
आप खाने में मजा नहीं,
जो औरों को खिलाने में है।
जिंदगी है चार दिन की,
तू किसीके काम आना सीख ले॥

अर्जुन में और दुर्योधन में क्या फर्क है ? अर्जुन कहता है कि मैं जिनके लिए युद्ध करूँगा वे लोग तो सामने के पक्ष में और मेरे पक्ष में मरने-मारने को तैयार हैं। वे अगर मर जायेंगे तो मुझे राज्य-सुख क्या मिलेगा ! मुझे ऐसा युद्ध नहीं करना। दूसरों का रक्त बहे और रक्त बहानेवाले चले जायें तो मैं राज्य क्या करूँगा ! मुझे नहीं करना युद्ध !

और दुर्योधन क्या बोलता है ? दुर्योधन का दृष्टिकोण बिना विवेक का है और अर्जुन का दृष्टिकोण विवेकपूर्ण है। दुर्योधन बिना विवेक के आज्ञा देता है। उसका उद्देश्य स्वार्थ-साधन है।

दुर्योधन बोलता है : **मदर्थे त्यक्तजीविताः... (गीता : १.९)** मेरे लिए ये जान कुर्बान करने को तैयार हैं। ये तो मर जायेंगे लेकिन मुझे राज्य मिलेगा। दुर्योधन की नजर स्वार्थी है। स्वार्थी नजरियेवाला अशांत रहता है, दुःखी रहता है और उसकी बुद्धि मारी जाती है।

अर्जुन क्या बोलता है ? अर्जुन की दृष्टि लोकहित की है।

येषामर्थे कांक्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च।
त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च॥

'हमें जिनके लिए राज्य, भोग और सुखादि अभीष्ट हैं, वे ही ये सब धन और जीवन की आशा को त्यागकर युद्ध में खड़े हैं।' **(गीता : १.३३)**

जिनके लिए मैं युद्ध करना चाहता हूँ वे ही युद्ध के लिए खड़े हैं तो मैं युद्ध क्यों करूँ ? अर्जुन की चेष्टा में सबका भला छुपा है और सबकी भलाई में युद्ध होता है तो उसमें युधिष्ठिर की जीत भी होती है, उनको राज्य भी मिलता है। श्रीकृष्ण के ज्ञान की महिमा भी होती है। लोकहित भी होता है और दुष्टों का दमन भी होता है और सज्जनों की सेवा भी होती है। अर्जुन का युद्ध बहुतों का मंगल लेकर चलता है और दुर्योधन का युद्ध अपना स्वार्थ, वासना, अहं पोसने को लेकर चलता है।

आपका जीवन दिव्य कब होता है ? आपका जो संकल्प है, जो कर्म है वह बहुतों का हित लेकर चले। आपकी बुद्धि परिवारवालों के हित में है तो आपका बोलना उनका दुःख दूर करनेवाला

तो है न ? आपका हिलना-डुलना-चलना औरों के लिए हितकारी है, मंगलकारी है कि दूसरों की आँख में चुभनेवाला है ? ऐसे कपड़े न पहनो कि जो किसीकी आँख में चुभें और उसको जलन हो । ऐसे बोल न बोलो कि **अंधे की औलाद अंधी ।** इन द्रौपदी के दो कटु वचनों ने दुर्योधन को वैरी बना दिया, महाभारत का युद्ध हुआ और लाखों-लाखों लोगों की जान ले ली ।

ऐसी वाणी बोलिये, मन का आपा खोय ।
औरन को शीतल करे, आपहुँ शीतल होय ॥
कागा काको धन हरै, कोयल काको देत ।
मीठा शब्द सुनाय के, जग अपनो करि लेत ॥

अर्जुन सबका भला चाहते हैं तो अर्जुन का बुरा होगा क्या ? मैं सबका भला चाहता हूँ तो सब मेरा भला नहीं चाहते हैं क्या ? मैं सबको स्नेह करता हूँ तो सब मेरे लिए पलकें बिछा के नहीं बैठते हैं क्या ? यह भगवत्प्रसादजा बुद्धि नहीं तो और क्या है ? अगर मैं स्वार्थपूर्ण हृदय से आऊँ तो इतने लोग घंटों भर बैठ नहीं सकते और बैठे तो अहोभाव नहीं रख सकते ।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई ।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई ॥

दूसरे के हित में आपका हित छुपा है क्योंकि दूसरे की गहराई में आपका परमेश्वर है वही-का-वही ! ❐

अमृतबिंदु

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

जब तक तवे पर शीतल पानी का भरा लोटा नहीं डालते, तब तक तवे की तपन नहीं जाती है, ऐसे ही जब तक चित्त में ॐकारस्वरूप ईश्वर की उपासना का मधुमय रस नहीं छिटकते हैं, तब तक उसमें काम-विकार की आग, क्रोध की आग, लोभ-मोह की परेशानी जीवात्मा को तपाती रहती है ।

सुदर्शन चक्र व गरुड़ का गर्व-भंग

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

एक बार हनुमानजी ने सुदर्शन चक्र और गरुड़ का भी गर्व-हरण कर दिया था । सुदर्शन और गरुड़ को हो गया था कि 'मैं बड़ा, मैं बड़ा... ।'

भगवान ने गरुड़जी के द्वारा हनुमानजी को बुलावा भेजा । गरुड़ गये और संदेशा दिया कि ''चलो, प्रभु बुला रहे हैं !''

हनुमानजी बोले : ''तुम चलो, मैं आ रहा हूँ ।''

''अरे, तुम आओगे तो कई दिन लग जायेंगे, मैं तुम्हें ले चलता हूँ ।''

''नहीं, तुम जाओ, मैं तुम्हें वहीं मिलता हूँ ।''

गरुड़जी के साथ हनुमानजी की जरा तू-तू, मैं-मैं हो गयी । गरुड़जी को पकड़ के हनुमानजी ने ऐसा फेंका कि द्वारिका के नजदीक समुद्र में पंख फड़फड़ाने लगे ।

सुदर्शन चक्र को भगवान ने आदेश दिया था कि हनुमान को बुलाया है पर कोई द्वारिका में आने न पाये । सुदर्शन चक्र वहीं द्वारिका के चारों ओर घुर-घुर घूमता रहा । हनुमानजी छलाँग लगा के द्वारिका तक पहुँच गये । गरुड़जी पहुँचें उसके पहले हनुमानजी पहुँच गये । सुदर्शन चक्र बोलता है कि ''मैं अंदर नहीं जाने दूँगा ।''

हनुमानजी : ''अरे बच्चा ! तू क्यों रोकता है मुझे ? भगवान ने मुझे बुलाया है । गरुड़जी पीछे आ रहे हैं, तू उनसे पूछ लेना ।'' इतने पर भी सुदर्शन चक्र ने रास्ता नहीं छोड़ा तो हनुमानजी ने उसको पकड़कर मुँह में डाल दिया, उसका गर्व तोड़ दिया । गरुड़ का गर्व तोड़ दिया, फिर भी उनको कोई गर्व नहीं है, हनुमानजी ऐसे सेवक हैं ! इसलिए कहा जाता है :

जय जय जय हनुमान गोसाईं ।
कृपा करहुँ गुरुदेव की नाईं ॥

जैसे गुरुदेव दिव्य कृपा करते हैं, हनुमानजी से भी ऐसी ही अपेक्षा की जाती है । ❐

ऐसे थे भगवान श्रीराम !

(श्रीराम नवमी : १ अप्रैल)

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

देवताओं ने देखा कि रावण के उपद्रव से प्रजा बहुत दुःखी है, त्राहिमाम् पुकार रही है। यज्ञ आदि पुण्यकर्म नहीं हो रहे हैं। देवताओं की, पितरों की तृप्ति का कार्य भी रावण नहीं करने देता है। इसलिए देवताओं ने ब्रह्माजी की आराधना की। ब्रह्माजी प्रकट हुए तो देवताओं ने लोगों की व्यथा सुनायी कि 'रावण अपने अहं की प्रधानता से सर्वेसर्वा होकर बैठा है।'

ब्रह्माजी ने कहा : ''रावण तो शिवभक्त है। उसे तो शिवजी का आशीर्वाद है। अतः उनके पास चलो।''

शिवजी के पास गये, स्तुति की। शिवजी प्रसन्न हुए। ब्रह्माजी की आगेवानी में देवताओं ने प्रार्थना की : 'हे देव ! कुछ कृपा कीजिये। रावण की उद्दंडता से प्रजा पीड़ित है, त्राहिमाम् पुकार रही है।' रावण शिवजी का तो भक्त था लेकिन मूल में भगवान नारायण का खास पार्षद था। शिवजी ने सोचा कि 'नारायण के पार्षद को मैंने ही वरदान दिये हैं। अब मैं ही उससे भिड़ूँ यह ठीक नहीं है। जिनका पार्षद है, वे ही निर्णय करें।' पहले से ही नियति थी उनकी तो शिवजी ने कहा : ''आप यहीं भगवान नारायण की स्तुति करके उनका आवाहन करो। भगवान नारायण ही इसका रास्ता निकालेंगे।''

छोटी-मोटी समस्या होती है तो ब्रह्माजी हल कर देते हैं, बीच की होती है तो शिवजी बोल देते हैं लेकिन यह बड़ी समस्या थी क्योंकि रावण कोई साधारण व्यक्ति नहीं था, बहुत सारी योग्यताएँ थीं उसमें। शिवभक्त था, यक्ष, गंधर्व, राक्षस सब उससे काँपते थे। सभी मनुष्य स्वर्ग जा सकें ऐसी सीढ़ी बनाने की उसकी योजना थी। अग्नि को धुआँरहित तथा समुद्र को मीठा बनाने की भी उसकी योजनाएँ थीं। भगवान विष्णु की स्तुति, आराधना की तो वे प्रकट हुए। देवताओं ने कहा : ''प्रभु ! आप ही हमारी रक्षा करो।''

रावण क्या है ?

मोहरूपी रावण है। जो हम नहीं हैं उसको 'मैं' मानना, इसीको बोलते हैं 'मोह'। बहुत सूक्ष्म, समझने योग्य बात है।

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला।
तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला॥

(श्री रामचरित उ.कां. : १२०.१५)

मोह सारी व्याधियों का मूल है, उससे जन्म-मरण का, भव का शूल पैदा होता है।

मोहरूपी रावण को अहंकार हुआ है कि 'मैं लंकापति रावण हूँ।' अहंकार से वासनाएँ उभरीं। वासनापूर्ति के लिए दम्भ करता है और दम्भ में विघ्न आने से हिंसा होती है।

देवताओं ने कहा : ''रावण के द्वारा किसीकी शारीरिक हिंसा, किसीकी वाचिक, किसीकी मानसिक तो किसीकी सैद्धांतिक हिंसा... हिंसा-ही-हिंसा हो रही है।''

भगवान ने कहा : ''अच्छा ! तो मुझे ही आना पड़ेगा। देवताओ ! तुम निश्चिंत रहो, ब्रह्माजी जो कहें उसके अनुसार अपने-अपने काम में लगो।''

नारायण तो चले गये। ब्रह्माजी ने वायुदेव, वरुणदेव, कुबेर आदि को कहा : ''तुम लोग भी भगवान नारायण की सहायता के लिए अलग-अलग रूप में पृथ्वी पर जन्म लो।''

पवनदेव हनुमान के रूप में आये। वरुण किसी रूप में आये, कोई जामवंत के रूप में आये,

बाकी के देव भी विभिन्न वानरों के रूप में आ गये । मनुष्यरूप में आते तो उनके रहने-खाने की बहुत ज्यादा व्यवस्था, सुविधा करनी पड़ती । बंदर हैं तो चलो, पेड़ों पर रह लेंगे, पत्ते भी खा लेंगे ।

मेघनाद और लक्ष्मण का युद्ध हुआ । लक्ष्मण की पत्नी थी उर्मिला और मेघनाद की पत्नी थी सुलोचना । दोनों पतिव्रताएँ थीं । अब दोनों के पातिव्रत्य जबरदस्त ! तो दोनों में से कोई योद्धा मरता नहीं, मूर्च्छित हो जाते हैं । आखिर में लक्ष्मणजी ने रामजी का ध्यान किया और दृढ़ संकल्प करके बाण मारा तो मेघनाद का हाथ कटकर सुलोचना के आँगन में जा गिरा ।

सुलोचना बोली : ''मैं जीवित हूँ और मेरे पति का हाथ ! अगर मैंने पातिव्रत-धर्म का पालन किया हो तो यह हाथ मुझे लिखकर बताये कि युद्धभूमि में क्या घटित हुआ है ।'' हाथ ने लिखा तो वह विलाप करने लगी ।

रावण को समाचार मिला कि मेघनाद मर गया है तो वह शोकातुर हो गया कि 'मेरा प्राणप्रिय आज्ञाकारी पुत्र नहीं रहा ।' पुत्र जितना वफादार होता है, पिता को उतना ही दुःख होता है । रोती हुई सुलोचना शोकागार में रावण के पास आयी तो रावण क्या कहता है : ''बेटी ! तेरा शोक, तेरा दुःख मैं जानता हूँ लेकिन तेरा ससुर तेरा दुःख-निवारण नहीं कर सकेगा । तू श्रीरामजी के पास जा, तेरा शोक श्रीरामचन्द्रजी मिटायेंगे ।''

रावण कितना बुद्धिमान है ! साधारण हस्ती नहीं था । वह जानता था कि जो महापुरुष रामतत्त्व में जगे हैं वे ही निर्दुःख कर सकते हैं । देखो, रावण के पास सूझबूझ कितनी है ! अपनी बहू को अपने बेटे की हत्या करनेवाले लक्ष्मण के भाई रामजी के पास भेजता है क्योंकि वह जानता है रामजी कौन हैं । रामजी को शत्रु मानता है पर रामजी की महिमा जानता है ।

रामजी कहते हैं : ''सुलोचना ! यह लक्ष्मण और मेघनाद का युद्ध नहीं था । बेटी ! तुम्हारे और उर्मिला के बीच का युद्ध था । तुम पतिव्रताओं में शिरोमणि हो और उर्मिला भी ऐसी है ।'' देखो, ध्यान देना रामजी की वाणी पर । 'तुम पतिव्रताओं में शिरोमणि हो, पतिव्रताओं में श्रेष्ठ हो और उर्मिला भी पतिव्रता है ।' रामजी मनोवैज्ञानिक ढंग से कितनी दूर का सोचकर एक-एक शब्द बोलते हैं !

''सुलोचना ! मेघनाद मारा गया, इसमें तुम्हारे पातिव्रत्य में कोई कमी नहीं है लेकिन मेघनाद ने मोह, अहंकार, वासना, दम्भ, हिंसा के प्राधान्य को मदद की थी । मेघनाद ने मोहरूपी रावण की मदद की थी । तुम्हारा पातिव्रत्य का बल अधर्म के पक्ष में खड़ा रहा और उर्मिला का पातिव्रत-बल लक्ष्मण के, धर्म के पक्ष में खड़ा रहा । मोह नहीं, यथार्थ वस्तु को जानना... अहंकार नहीं, स्वस्वरूप में विश्रांति... वासना नहीं, निर्वासना... लक्ष्मण ब्रह्म के पक्ष में है और मेघनाद मोह के पक्ष में था ।

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला ।

सुलोचना ! यह मोह की हार हुई है । मेघनाद की हार नहीं है, सुलोचना की हार नहीं है । यह मोह की हार है, अहंकार की हार है । यह सब लीला है ।''

सुलोचना को समझ आ गयी तो संतुष्ट हो गयी । शोकातुर सुलोचना आत्मज्ञान में जग गयी । शत्रुपक्ष की बहूरानी को आत्मरस से तृप्त करना यह रामजी का ही तो काम है, दूसरे किसकी ताकत है ? रामजी में द्वेष नहीं है, मोह नहीं है, शोक नहीं है । सुलोचना का शोक चला गया । मोह से यह सारा संसार दुःखी होता है और मोह के जाने से यह सब खेल लगता है ।

युद्ध पूरा हुआ तो इन्द्रदेव आये, बोले : ''प्रभुजी ! देवताओं का मनोरथ पूरा हुआ । रावण युद्ध में मारा गया । मेरे लिए क्या आज्ञा है ?''

बोले : ''आप अमृत की वृष्टि कर दो ।''

अमृतवृष्टि हुई तो सब वानर जीवित हो गये पर राक्षस जीवित नहीं हुए । 'अमृत सब पर गिरा

था तो राक्षस जीवित क्यों नहीं हुए ?'- यह सवाल उठता है ।

राक्षस लोग रामजी को अपना विरोधी मानकर लड़ रहे थे तो रामजी का चिंतन करते-करते मरे इसलिए वे रामजी के धाम में चले गये और जीवित नहीं हुए । यह है भगवान के चिंतन का प्रभाव !

रावण ने सोचा कि 'हमारा शरीर राक्षसी - तामसी है, इससे भगवान की भक्ति तो कर नहीं पायेंगे । हम वैर से भी भगवान को याद करेंगे तो भी तर जायेंगे । मैं तो अपने लंकावासियों को वैकुंठ भेजना चाहता हूँ ।' अब रावण जैसा आज का कोई नेता हो तो मुझे बताओ तो मैं उसका सत्कार करूँगा । जीते-जी तो प्रजा को सुवर्ण के घरों में रखता है, मरने के बाद वैकुंठ दिलाता है ! आज के नेता तो देश-परदेश में करोड़ों-अरबों-खरबों जमा करके मर जाते हैं ।

जब रामजी के साथ रावण का युद्ध हुआ तो रावण का सिर कटता और फिर लग जाता । हाथ कटे तो फिर से लग जाय क्योंकि शिवजी का वरदान था । रामजी चकित हो गये तो विभीषण ने कहा कि 'इसकी नाभि में अमृत है इसलिए यह नहीं मरता है । इसकी वासना है कि मैं जीवित रहूँ ।' दृढ़ वासना का केन्द्र स्वाधिष्ठान केन्द्र होता है । यह केन्द्र रूपांतरित हो तब रावण मरता है । अमृत अर्थात् न मरने की जो पकड़ है वह नाभि में है । जब वहाँ बाण मारा तब रावण गिरा ।

श्रीरामजी ने लक्ष्मण से कहा : ''आज धरती से एक महायोद्धा, महाबुद्धिमान, महाप्रजापालक जा रहा है । जाओ, उनसे कुछ ज्ञान ले लो ।''

देखो कितना आदर है ज्ञान का ! शत्रु से भी ज्ञान लेने को भेज रहे हैं । यह काम रामजी के अलावा कौन कर सकता है ! पर रामजी के मन में शत्रुभाव नहीं है, द्वेषभाव नहीं है ।

लक्ष्मण को यह बात विचित्र लगी, बोले : ''माँ सीता का धोखे से अपहरण करके जो राक्षस ले आया, उसके लिए आप 'महान... महान...' बोलते हैं प्रभु ! मुझे यह समझ में नहीं आता ।''

''लक्ष्मण ! सीता-अपहरण के जघन्य अपराध को छोड़ दो तो उनमें बहुत सारी योग्यताएँ थीं । जाओ, उनसे उपदेश लो ।''

लक्ष्मण गये और वापस लौटकर आ गये, उपदेश नहीं मिला । रामजी ने पूछा : ''उपदेश माँगने के लिए गये थे तो कहाँ खड़े थे ?''

बोले : ''उसके सिर के नजदीक ।''

''सिर पर चढ़कर कोई ज्ञान लिया जाता है क्या ! चरणों में बैठकर ज्ञान लिया जाता है । उनके चरणों की तरफ खड़े रहकर विनम्र वाणी से प्रार्थना करना । चलो, मैं भी साथ में चलता हूँ ।''

लक्ष्मण ने जाकर विनम्र वाणी से प्रार्थना की, तब लंकेश ने उठने की असमर्थता के कारण मन-ही-मन भक्तिभावपूर्वक रामजी को प्रणाम किया और कहा : ''हे रघुनाथ ! मेरे पास समुद्र को खारेपन से रहित तथा चन्द्रमा को निष्कलंक बनाने की योजनाएँ थीं । अग्नि कहीं भी जले धुआँ न हो, धूम्र बिना की अग्नि और स्वर्ग तक की सीढ़ियाँ मैं बनाना चाहता था ताकि सामान्य आदमी भी स्वर्ग का रहस्य जान सके और स्वर्ग की यात्रा करके आ सके । मुझे प्रजा के लिए यह सब करना था लेकिन सोचा, 'यह बाद में करेंगे ।' मैंने विषय-सुख में, जरा नाच में, जरा सुंदरी के साथ वार्ता में, वाहवाही में... पाँचों विषयों में जरा-जरा करके समय गँवा दिया । जो करने थे वे काम मेरे रह गये । इसलिए हे रामजी ! **मेरे जीवन का सार यह है कि मनुष्य को अच्छे काम में देर नहीं करनी चाहिए और विषय-विकारों की बात को टालकर उनसे बचते हुए निर्विषय नारायण के सुख में जाना चाहिए, अन्यथा वह मारा जाता है ।** मेरे जैसे लंकेश की दुर्दशा होती है तो सामान्य आदमी की बात क्या करना !''

मरते समय रावण कहता है : ''हे रामचन्द्रजी ! आप तो महान हैं, आपके चरणों में मेरे प्रणाम हैं ।'' ❐
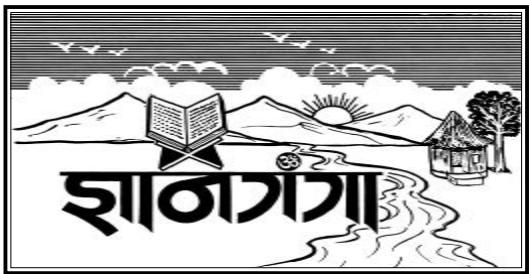
एक में अनेक, अनेक में एक एक-ही-एक

(पूज्य बापूजी के मुखारविंद से निःसृत ज्ञानगंगा)

अणोरणीयान्महतो महीयानात्मास्य
जन्तोर्निहितो गुहायाम् ।

'इस जीवात्मा की हृदयरूपी गुफा में रहनेवाला परमात्मा सूक्ष्म से अति सूक्ष्म और महान से भी महान है ।' **(कठोपनिषद्, द्वितीय वल्ली : २०)**

उसके विषय में कहा गया है :

न जायते म्रियते वा कदाचि-
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः ।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥

'यह आत्मा किसी काल में भी न तो जन्मता है और न मरता ही है तथा न यह उत्पन्न होकर फिर होनेवाला ही है क्योंकि यह अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है । शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता है ।' **(गीता : २.२०)**

शरीर के मरने पर भी जो शुद्ध 'मैं' है वह मरता नहीं है । देखा जाय तो शरीर भी वास्तव में नहीं मरता है । मृत्यु के बाद शरीर को जला दो तो उसका जो जलीय भाग है वह वाष्प हो जायेगा और बादल बनकर कहीं बरसेगा । जो पृथ्वी का भाग है वह राख होकर मिट्टी में मिल जायेगा, उससे कोई पौधा उगेगा । जो तेज का अंश है, अग्नि का भाग है, वह महाअग्नि में मिल जायेगा । उसमें जो आकाश-तत्त्व है वह महाकाश में मिल जायेगा ।

नाश तो कुछ होता नहीं है, रूपांतरित होता है । हमारी आँखों से कोई ओझल होता है तो हम समझते हैं वह मर गया । वास्तव में कोई मरता नहीं है । जब कोई मरेगा नहीं तो जन्मेगा कैसे ? उन पंचमहाभूतों का थोड़ा-थोड़ा हिस्सा इकट्ठा होकर शरीर दिखता है, तब कहते हैं, 'जन्म हुआ' । वह जियेगा ६०-७० साल, फिर वे पाँच भूत अलग-अलग व्यापक पाँच महाभूतों में मिल जाते हैं, उसे कहते हैं 'मर गया' । वास्तव में तो

न कोई जन्मे, न कोई मरे,
न कोई भाई, न कोई बाप ।
आप ही लाड़ी, आप ही लाड़ा,
जहाँ देखो वहाँ आप-ही-आप ॥

कहीं तो वह लाड़ी के रूप में दिख रहा है, कहीं लाड़ा दिख रहा है किंतु है तो वही चैतन्य आत्मा । अनेक रूपों में वही एक है । संसार के सारे क्रिया-कलापों का आधार भी वही है । जैसे सिनेमा में आप देखते हैं कि एक ही प्रकाश है पर प्लास्टिक (फिल्म) की पट्टियों पर पड़ता है तो अनेक रूप-रंग और क्रियाएँ देखने को मिलती हैं । कहीं मोटरगाड़ी भागी जा रही है तो कहीं रेलगाड़ी दौड़ रही है । कहीं नायिका को गुंडों ने पकड़ा है, कहीं बस्ती में आग लगायी जा रही है तो कहीं उत्सव मनाया जा रहा है । इस प्रकार देखोगे कि आग भी उसीमें, बस्ती भी उसीमें, नायिका भी वहीं और गुंडे भी वहीं, उसी पर्दे पर । सब प्रकाश का ही चमत्कार है ।

एक ही प्रकाश अनेक रूपों में दिखता है । ऐसे ही अनेक रूपों में छिपा हुआ एक-का-एक जो तत्त्व है वही सबका आधार है । वह एक ही तत्त्व अनेक रूपों में भासता है । यह ज्ञान समझ में आ जाय तो फिर काम, क्रोध, लोभ, मोह, मेरा-तेरा सब छूट जायेगा । ये गुलाब, गेंदा, चमेली, सेब-संतरे सब अलग-अलग दिखते हैं लेकिन तत्त्वदृष्टि से देखो तो सब एक है । ऐसे ही जिसको तत्त्व की बात समझ में आ जाय वह चांडाल, कुत्ता, गाय, ब्राह्मण और हाथी में छुपे हुए एक तत्त्व को जानकर सबको समभाव से देखता है ।

जिसने भी उस तत्त्व को जान लिया है, तत्त्व का ज्ञान पा लिया है, उसे तो सर्वत्र वही, आकाश से भी सूक्ष्म चिदानंदघन परमेश्वर नजर आता है । वह अपने-आपको भी वहीरूप जान लेता है । उसके रोम-रोम से **'सर्वोऽहम्'** के आंदोलन स्वाभाविक रूप से फैलते रहते हैं ।

तुम कितने भी भयानक हो, कितने भी डरावने हो, तुम्हें देखकर छोटे-बड़े डर जायें लेकिन तुम अपने-आपको देखकर कभी नहीं डरोगे । मान लो तुम्हारा रूप इतना सुहावना है कि तुम्हें देखकर कई लोग तुम्हारे पीछे दीवाने हो जायें, पर तुम अपने को देखकर दीवाने होओगे क्या ? नहीं । दूसरे को देखकर काम होगा, दूसरे को देखकर क्रोध होगा, दूसरे को देखकर मोह होगा । अपने को देखकर काम, क्रोध, मोह थोड़े ही होगा ! अगर आप सबमें अपना-आपा देख लोगे तो फिर आप-ही-आप बचोगे, तब काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, ईर्ष्या, चिंता सब शांत हो जायेगा । यह ज्ञान समझ में आ जाय तो जपी का जप सफल हो जाय, तपी का तप सफल हो जाय । ऐसा अद्‌भुत ज्ञान है यह आत्मज्ञान ! ❐

भक्तों की कतार

भक्तों की कतार, रस्ते-रस्ते ।
ढूँढ़े गुरु का द्वार, रस्ते-रस्ते ।
गुरुवर जब से तुमने बाँह पकड़ ली है ।
हमने तुमसे प्रेम-सगाई कर ली है ।
छोड़ दिया संसार, हँसते-हँसते ॥
हमको तो तेरा मजबूत सहारा है ।
माया ने जब भी जाल पसारा है ।
बचा लिया हर बार, फँसते-फँसते ॥
सिर देकर भी मोल मिलो तो ले लेंगे ।
तन, मन, धन के तोल मिलो तो ले लेंगे ।
मिला तुम्हारा प्यार, सस्ते-सस्ते ॥
दर्शन को अखियाँ प्यासी, आ जाओ ।
वंदन को तरसे धरती, अब आ जाओ ।
करते भक्त पुकार, रस्ते-रस्ते ॥

- 'चाँद' लखनवी, लखनऊ

अपानवायु मुद्रा

लाभ : हृदयरोगों जैसे कि हृदय की घबराहट, हृदय की तीव्र या मंद गति, हृदय का धीरे-धीरे बैठ जाना आदि में थोड़े ही समय में लाभ होता है ।

अगर किसीको हृदयाघात (हार्ट-अटैक) आये या हृदय में अचानक पीड़ा होने लगे, तब तुरंत ही यह मुद्रा करने से हृदयाघात को भी रोका जा सकता है ।

पेट की गैस, मेद की वृद्धि और हृदय तथा पूरे शरीर की बेचैनी इस मुद्रा के अभ्यास से दूर होती है । आवश्यकतानुसार हररोज २० से ३० मिनट तक इस मुद्रा का अभ्यास किया जा सकता है ।

विधि : अँगूठे के पासवाली पहली उँगली को अँगूठे के मूल में लगाकर अँगूठे के अग्रभाग को बीच की दोनों उँगलियों के अग्रभाग के साथ मिलाकर सबसे छोटी उँगली (कनिष्ठिका) को अलग से सीधी रखें । इस स्थिति को अपानवायु मुद्रा कहते हैं ।

(आश्रम से प्रकाशित 'जीवन विकास' पुस्तक से)

निःस्वार्थ कर्म कर्मयोग है

जो स्वार्थबुद्धि से कर्म करते हैं उनको घाटा-ही-घाटा है । जो निःस्वार्थ बुद्धि से सेवाकार्य करते हैं उनको जो फायदा होता है उसकी तुलना रुपये-पैसों से नहीं हो सकती । स्वार्थपूर्ण कर्म तुच्छ कर्म कहे गये । निःस्वार्थ कर्म 'कर्मयोग' हो जाता है, परमात्मा को प्रसन्न करनेवाला, आत्मप्रसन्नता देनेवाला हो जाता है । - पूज्य बापूजी

जो महापातकियों को भी पापमुक्त कर दे

(पापमोचनी एकादशी : १८ मार्च)

युधिष्ठिर ने भगवान से चैत्र (गुजरात-महाराष्ट्र के अनुसार फाल्गुन) मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी के बारे में जानने की इच्छा प्रकट की तो वे बोले : ''राजेन्द्र ! मैं तुम्हें एक पापनाशक उपाख्यान सुनाऊँगा, जिसे मांधाता को महर्षि लोमश ने बताया था।

मांधाता ने पूछा : ''भगवन् ! चैत्र मास के कृष्ण पक्ष में किस नाम की एकादशी होती है तथा उससे किस फल की प्राप्ति होती है ?''

लोमशजी बोले : ''नृपश्रेष्ठ ! पूर्वकाल की बात है । मंजुघोषा नामक अप्सरा मुनिवर मेधावी को मोहित करने के लिए गयी । वे महर्षि वन में रहकर ब्रह्मचर्य का पालन करते थे । मंजुघोषा मुनि के भय से आश्रम से एक कोस दूर ही ठहर गयी और वीणा बजाती हुई मधुर गीत गाने लगी । मेधावी घूमते हुए उधर जा निकले और उस सुंदर अप्सरा को देख मोह के वशीभूत हो गये । यह देख मंजुघोषा समीप आयी और उनका आलिंगन करने लगी । मेधावी भी उसके साथ रमण करने लगे । रात और दिन का भी उन्हें भान न रहा । बहुत दिन व्यतीत हो जाने पर मंजुघोषा ने मुनिश्रेष्ठ मेधावी से कहा : ''ब्रह्मन् ! अब मुझे देवलोक जाने की आज्ञा दीजिये ।''

मेधावी बोले : ''देवी ! जब तक सवेरे की संध्या न हो जाय तब तक मेरे ही पास ठहरो ।''

अप्सरा ने कहा : ''विप्रवर ! अब तक न जाने कितनी ही संध्याएँ चली गयीं ! जरा बीते हुए समय का विचार तो कीजिये !''

यह सुनकर मेधावी चकित हो उठे । अप्सरा के साथ रहते हुए उन्हें सत्तावन वर्ष हो गये थे । उसे अपनी तपस्या का विनाश करनेवाली जानकर मुनि को बड़ा क्रोध आया । उन्होंने शाप देते हुए कहा : ''पापिनी ! तू पिशाची हो जा ।'' वह नतमस्तक हो बोली : ''विप्रवर ! इस शाप से मेरा उद्धार कीजिये । सात वाक्य बोलने या सात पद साथ चलनेमात्र से ही सत्पुरुषों से मैत्री हो जाती है । ब्रह्मन् ! मैंने तो आपके साथ अनेक वर्ष व्यतीत किये हैं, अतः स्वामिन् ! मुझ पर कृपा कीजिये ।''

मुनि बोले : ''भद्रे ! तुमने मेरी तपस्या नष्ट कर डाली । फिर भी सुनो । चैत्र कृष्ण पक्ष में जो 'पापमोचनी एकादशी' आती है वह शाप से उद्धार करनेवाली व सब पापों का क्षय करनेवाली है । उसीका व्रत करने पर तुम्हारी पिशाचता दूर होगी ।''

फिर मेधावी अपने पिता च्यवन के आश्रम पर गये । च्यवन ऋषि बोले : ''बेटा ! यह क्या किया ? तुमने तो अपने पुण्य का नाश कर डाला !''

मेधावी बोले : ''पिताजी ! मैंने बड़ा पातक किया है । अब आप ही कोई प्रायश्चित बताइये, जिससे इस पातक का नाश हो जाय ।''

च्यवन ने कहा : ''बेटा ! चैत्र कृष्ण पक्ष में जो 'पापमोचनी एकादशी' आती है, उसका व्रत करने पर पापराशि का विनाश हो जायेगा ।''

मेधावी ने उस व्रत का अनुष्ठान किया । उनका पाप नष्ट हो गया । वे पुनः तपस्या से परिपूर्ण हो गये। इसी प्रकार मंजुघोषा भी 'पापमोचनी' का व्रत करने के कारण पिशाचयोनि से मुक्त हुई और दिव्य रूपधारिणी श्रेष्ठ अप्सरा होकर स्वर्गलोक में चली गयी ।''

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : ''राजन् ! जो मनुष्य 'पापमोचनी एकादशी' का व्रत करते हैं उनके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं । इसके माहात्म्य को पढ़ने-सुनने से सहस्र गौदान का फल मिलता है । ब्रह्महत्या, सुवर्ण की चोरी, सुरापान और गुरुपत्नीगमन करनेवाले महापातकी भी इस व्रत को करने से पापमुक्त हो जाते हैं । यह व्रत बहुत पुण्यमय है ।''

कामना पूर्ण करनेवाला व्रत

(कामदा एकादशी : ३ अप्रैल)

युधिष्ठिर ने पूछा : ''वासुदेव ! चैत्र शुक्ल पक्ष में किस नाम की एकादशी होती है ?''

भगवान बोले : ''राजन् ! यह कथा ध्यान से सुनो, जो वसिष्ठजी ने राजा दिलीप से कही थी।

दिलीप ने पूछा : ''भगवन् ! चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में कौन-सी एकादशी होती है ?''

वसिष्ठजी बोले : ''राजन् ! चैत्र शुक्ल पक्ष में 'कामदा' नाम की एकादशी होती है। वह परम पुण्यमयी है । पापरूपी ईंधन के लिए तो वह दावानल ही है।

प्राचीनकाल की बात है। नागपुर नाम का एक सुंदर नगर था। वहाँ महा भयंकर नाग निवास करते थे। पुंडरीक नाम का नाग उन दिनों वहाँ राज्य करता था। गंधर्व, किन्नर और अप्सराएँ भी उस नगर का सेवन करती थीं। वहाँ एक श्रेष्ठ अप्सरा थी, जिसका नाम ललिता था । उसके साथ ललित नामवाला गंधर्व भी था। वे दोनों पति-पत्नी के रूप में रहते थे। दोनों ही परस्पर काम से पीड़ित रहा करते थे।

एक दिन की बात है, नागराज पुंडरीक राजसभा में मनोरंजन कर रहा था । उस समय ललित का गान हो रहा था किंतु उसके साथ ललिता नहीं थी। गाते-गाते उसे ललिता का स्मरण हो आया। अतः उसके पैरों की गति रुक गयी व जीभ लड़खड़ाने लगी।

नागों में श्रेष्ठ कर्कोटक ने राजा पुंडरीक को गान में त्रुटि होने की बात बता दी । नागराज पुंडरीक की आँखें क्रोध से लाल हो गयीं। उसने ललित को शाप दिया : ''दुर्बुद्धे ! तू मेरे सामने गान करते समय भी पत्नी के वशीभूत हो गया, इसलिए राक्षस हो जा।''

इतना कहते ही वह गंधर्व राक्षस हो गया।

ललिता पति की विकराल आकृति देख बहुत चिंतित हुई।

सोचने लगी, 'क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? मेरे पति पाप से कष्ट पा रहे हैं।'

वह रोती हुई घने जंगलों में पति के पीछे-पीछे घूमने लगी। वन में उसे एक आश्रम दिखायी दिया, जहाँ एक मुनि शांत बैठे हुए थे । ललिता मुनि को प्रणाम करके खड़ी हो गयी। मुनि बड़े दयालु थे। बोले : ''शुभे ! तुम कौन हो ? कहाँ से आयी हो ? मेरे सामने सच-सच बताओ।''

ललिता ने कहा : ''महामुने ! मैं गंधर्व वीरधन्वा की पुत्री हूँ। मेरा नाम ललिता है। मेरे स्वामी राक्षस हो गये हैं। ब्रह्मन् ! इस समय मेरा जो कर्तव्य हो, वह बताइये। विप्रवर ! जिस पुण्य के द्वारा मेरे पति राक्षसभाव से छुटकारा पा जायें, उसका उपदेश कीजिये।''

ऋषि बोले : ''भद्रे ! इस समय 'कामदा' नामक एकादशी तिथि है, जो सब पापों को हरनेवाली और उत्तम है । तुम उसीका विधिपूर्वक व्रत करो और उस व्रत का जो पुण्य हो, उसे अपने स्वामी को दे डालो। पुण्य देने पर क्षण भर में ही शाप का दोष दूर हो जायेगा।''

राजन् ! ललिता ने एकादशी को उपवास करके द्वादशी के दिन उन ब्रह्मर्षि के समीप ही भगवान के (श्रीविग्रह के) समक्ष अपने पति के उद्धार के लिए यह वचन कहा : ''मैंने जो यह 'कामदा एकादशी' का उपवास-व्रत किया है, उसके पुण्य के प्रभाव से मेरे पति का राक्षसभाव दूर हो जाय।''

वसिष्ठजी कहते हैं : ''ललिता के इतना कहते ही उसी क्षण ललित का पाप दूर हो गया। उसे पुनः गंधर्वत्व की प्राप्ति हुई।

नृपश्रेष्ठ ! वे दोनों पति-पत्नी 'कामदा' के प्रभाव से सुंदर रूप धारण करके विमान पर आरूढ़ होकर शोभा पाने लगे। यह जानकर इस एकादशी के व्रत का यत्नपूर्वक पालन करना चाहिए।

यह 'कामदा एकादशी' ब्रह्महत्या आदि पापों तथा पिशाचत्व आदि दोषों का नाश करनेवाली है। राजन् ! इस माहात्म्य को पढ़ने और सुनने से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है।''

('पद्म पुराण' से संक्षिप्त) ❒

उज्ज्वल व्यवहार के सूत्र

व्यवहार मानव-जीवन की रीढ़ है । यदि हम दूसरों से अच्छा व्यवहार बरतना नहीं जानते तो जीवन में हमें पग-पग पर ठोकरें लगेंगी और यदि हमारा व्यवहार अच्छा है तो हमारे जीवन में सदैव सरसता रहेगी । गृहस्थ हो या विरक्त, स्त्री हो या पुरुष - सबको व्यवहार की शुद्धि आवश्यक है । इसके लिए निम्न सूत्रों का गम्भीरतापूर्वक चिंतन-मनन करते हुए आचरण करने से व्यक्ति सबका प्यारा हो जाता है और उसे हर जगह सफलता मिलती है ।

(१) गहरी समझदारी : छिछली बुद्धि रखनेवाला व्यक्ति छिछला व्यवहार ही करता है । अतः हर बात को अच्छी तरह विचारकर व्यवहार करना चाहिए । हर क्रिया व व्यवहार के पीछे परिणाम क्या होगा, यह समझ लेना ही गहरी समझदारी का लक्षण है । जो परिणाम का विचार किये बिना जल्दबाजी में काम करता है, वह उथली बुद्धि का व्यक्ति समाज में हँसी का पात्र बनता है । गहरी समझ से किये गये काम से मनुष्य की सर्वत्र प्रशंसा होती है ।

(२) निर्णय-क्षमता : जिसमें सही निर्णय लेने की क्षमता है उसका व्यवहार निष्कंटक होगा । कितने लोग कई बार विचारकर भी सही निर्णय नहीं ले पाते । ऐसे लोग अपने निश्चय को बार-बार बदलते रहते हैं और कहीं कोई कार्यक्रम निश्चित करने के बाद भी वहाँ नहीं जाते । अनेक बार वे अपनी ही बात को समाज में काट देते हैं । वे अपने निकट के लोगों में ही अपनी अस्थिरता बनाये रखते हैं । ऐसे लोगों पर दूसरों का तो दूर की बात, अपने लोगों का ही विश्वास नहीं रह जाता । अपने अस्थिर व्यवहार से ऐसे लोग स्वयं अशांत रहते हैं ।

सही निर्णय लेने की क्षमतावाला किसी भी विषय में विचारकर निर्णय ले लेता है और उसे पूरा करता है । उसका निर्णय सही, हितकर, पक्का तथा निश्चल होता है । वह अपने वचनों एवं कार्यक्रमों में पक्का होता है । जिससे वह सबका विश्वासपात्र हो जाता है ।

(३) शांत मन से निर्णय : शांत मन द्वारा लिया हुआ निर्णय सही तथा हितकर होता है । जो काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, भ्रम आदि में निर्णय लेता है उसका निर्णय न उसके लिए हितकर होता है और न दूसरों के लिए । अतः परमात्मा में कुछ क्षण शांत होकर ही निर्णय लेना चाहिए । परमात्मशांति सर्व सफलताओं की जननी है ।

(४) सम्मति लेकर काम करना : कोई भी काम अपने साथियों, परिवारवालों, अनुगामियों या हितचिंतकों से राय लेकर ही करना चाहिए । अहंकार, स्वार्थ या अज्ञानवश जो लोग अपने हितैषियों से राय लिये बिना काम करते हैं वे धीरे-धीरे अलग-थलग पड़ जाते हैं और उनकी उन्नति रुक जाती है ।

(५) अनुगामियों को श्रेय : परिवार या समाज के मालिक को चाहिए कि वह अपने परिवार के सदस्यों या अनुगामियों में जितनी योग्यता देखता जाय, उन्हें व्यवस्था का उत्तरदायित्व देता चला जाय । व्यक्ति के ऊपर जिम्मेदारी आने पर ही उसके गुण निखरते हैं । जो मालिक या महंत अपने अनुयायियों को सदैव अयोग्य ही मानता रहेगा और उन्हें कभी कोई योग्य उत्तरदायित्व नहीं देगा, उसके अनुयायी उस दिशा में कभी भी अपने व्यक्तित्व का विकास नहीं कर सकते ।

काम करने पर ही काम करने की क्षमता और बुद्धि बढ़ती है। अपने अनुयायियों को बुरा कहकर उन्हें कोंचते न रहो, अपितु उन्हें काम की जिम्मेदारी दो, उन्हें श्रेय दो, वे आगे बढ़ जायेंगे।

(६) असफलता के भय का त्याग : कुछ लोगों को किसी भी नये काम को करने में असफल होने का भय रहता है। यह ठीक है कि सोच-समझ के एवं परिणाम का विचार करके ही काम करना चाहिए परंतु जो सदैव असफलता का ही भय पाले रखेगा, वह क्या उन्नति कर सकता है ! जो घाटा होने के भय से व्यापार नहीं करता, पतन के डर से भक्ति, वैराग्य-पथ नहीं अपनाता और असफलता के डर से किसी उन्नति के काम में हाथ नहीं डालता, वह जीवन में केंचुआ बनकर रह जायेगा। अतः स्व-परहित की दृष्टि एवं आत्मविश्वास रखकर काम करो, सफलता तुम्हारे चरण चूमेगी।

उद्यमः साहसं धैर्यं बुद्धिः शक्तिः पराक्रमः।
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र देवः सहायकृत् ॥

'उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम - ये छः गुण जिस व्यक्ति के जीवन में हैं, अंतर्यामी देव (परब्रह्म परमात्मा) उसकी पग-पग पर सहायता करते हैं।'

(७) दोषदृष्टि का त्याग : जो अपने साथियों, अनुगामियों में दोष ढूँढ़ता तथा उनके दोषों की चर्चा लोगों में करता रहता है, वह कभी भी व्यवहार में सफल नहीं हो सकता, फिर परमार्थ तो बहुत दूर की बात है। हर आदमी में गुण-दोष होते हैं। उनके दोष देखते रहने से दोष ही दिखते रहेंगे और यदि उनके सद्गुण देखे जायें तो उनमें सद्गुण भी काफी मिलेंगे। अपने साथियों, अनुगामियों की बुराई करके कोई पनप नहीं सकता। अतः दोषदृष्टि का त्याग करके सबमें सद्गुण देखते हुए व्यवहार बरतना चाहिए।

(८) सहृदयता : मान लो, किसीमें अधिक दोष हैं या किसीने बहुत बड़ा अपराध कर डाला, परंतु क्या उससे घृणा करने, उसकी निंदा एवं बुराई करने से वह सुधर सकेगा ? नहीं। उसके साथ सहृदयता का व्यवहार करना चाहिए। उससे घृणा न करके प्यार करना चाहिए। यदि कोई बड़े-से-बड़ा अपराधी है और वह सुधरना चाहता है तो वह स्वामी एवं स्वजनों के प्यार से ही सुधर सकता है। ऐसे आदमी को सोचने-समझने और सुधरने का अवसर देना चाहिए।

(९) सहनशीलता : घर का स्वामी, समाज का मुखिया, सहनशील बनकर ही अनुयायियों को सन्मार्ग में लगाये रख सकता है। असहनशील स्वामी परिवार या समाज को नहीं चला सकता। यही बात अधीनस्थ सदस्यों पर भी लागू होती है। वे भी यदि सहनशील न हों तो परिवार या समाज में न तो निभ सकते हैं और न कोई उन्नति ही कर सकते हैं। जिस परिवार या समाज में आपस में कटाकटी चलती है, वह शीघ्र नष्ट हो जाता है। समाज का कोई सदस्य गड़बड़ हो तो केवल वही गिरेगा किंतु यदि मालिक गड़बड़ तथा असहनशील हो तो समाज बिखर जायेगा। यदि वह ठीक है तो समाज व्यवस्थित रहेगा।

(१०) विनम्रता : विनम्रता का गुण सभीमें अति आवश्यक है। परंतु स्वामी को तो अधिक विनम्र होना चाहिए। विनम्र होकर ही वह साथियों को सँभाल पायेगा। अहंकारी एवं अकड़ू स्वामी अनुगामियों को क्षुब्ध कर उनसे कट जाता है। जो जितने ऊँचे पद पर हो, उसे उतना ही मन से विनम्र होना चाहिए, तभी वह किसी समूह को अनुशासित कर सकता है।

(११) स्वार्थत्याग एवं क्षमावृत्ति : अपने मन के स्वार्थ को जीतकर ही अनुगामियों की रक्षा की जा सकती है। साथियों के मन तथा शरीर की रक्षा करना स्वामी का कर्तव्य है। स्वामी को चाहिए कि वह अनुगामियों को मानसिक संतोष दे तथा उनकी शारीरिक व्याधि में उनके साथ सहानुभूति

का व्यवहार करे एवं यथाशक्ति उनकी चिकित्सा एवं सेवा का प्रबंध करे । उनके सद्गुणों की चर्चा, सत्योपदेश तथा रचनात्मक दिशा में प्रेरणा देकर ही अनुगामियों को मानसिक संतोष दिया जा सकता है ।

(१२) स्नेहभाव : स्वामी को माँ की तरह स्नेहहृदय होना चाहिए । स्वामी के मीठे वचन, कोमल व्यवहार एवं स्नेहभरा हृदय अनुगामियों के दिल को जीत लेता है । इनके बिना स्वामी समाज-उन्नति में असफल हो जाता है। स्नेहयुक्त व्यवहार से ही जीवन, परिवार तथा समाज स्वर्ग बन जाता है ।

(१३) समन्वय-दृष्टि : साथियों की गलत बातों को हटाकर तथा उनकी उचित बातों का समर्थन कर एकता स्थापित करना समन्वय है । जहाँ चार बर्तन होते हैं, वहाँ कुछ आवाज जरूर होगी । उन्हें सँभालकर रखना समझदार का काम है । इसी प्रकार परिवार एवं समाज में जहाँ ५-१०-५० आदमी हों, वहाँ उनके स्वभाव, रुचियों, आदतों एवं योग्यताओं में भिन्नता होगी ही । सबमें कुछ-न-कुछ कमजोरियाँ होती ही हैं । स्वामी का कर्तव्य है कि वह अपनी विशाल एवं समन्वयात्मक दृष्टि से सबको सँभालकर उन्हें रचनात्मक दिशा दे। समन्वय करके ही व्यवहार पवित्र बनाया जा सकता है ।

उपरोक्त सद्गुण जिसमें होते हैं, वह सबके लिए आदर्श बन जाता है। ऐसे आदर्श स्वामी मिलें तो सेवक उनका फायदा ले, आज्ञाकारी बने, अहोभाव से भरा रहे। उद्यम, साहस, धैर्य, संयम, सेवा, सहनशीलता आदि सद्गुणों से सम्पन्न हो, यह उसका कर्तव्य है। जो इस कर्तव्य से च्युत होते हैं वे इतने आदर्श स्वामी का फायदा नहीं ले पाते । कूड़े-कपटी, दगाबाज, स्वार्थी बनकर अथवा गंदे चलचित्र देख के महान स्वामी के होते हुए भी पतन की खाई में नहीं गिरना चाहिए । ❐

भगवद्भक्त राजा पृथु

महान भगवद्भक्त ध्रुव के वंश में वेन नाम का राजा हुआ, जो बड़ा अत्याचारी, धर्म-विरोधी था । उसके अत्याचारों से पीड़ित होकर ऋषियों ने उसे शाप देकर मार डाला। वेन की कोई संतान नहीं थी ।

राजा से रहित राज्य में चोर, डाकू, लुटेरे बढ़ गये, जो प्रजा को कष्ट देने लगे । यह देखकर ऋषियों ने वेन के शरीर को मथकर एक स्त्री-पुरुष का जोड़ा उत्पन्न किया । पुरुष के रूप में उत्पन्न भगवान विष्णु के अंशावतार महाराज पृथु कहलाये और स्त्री के रूप में भगवती लक्ष्मी के अंश से उत्पन्न उनकी पत्नी अर्चि कहलायीं ।

राजा वेन के पापाचार से पृथ्वी पर से अन्न नष्ट हो गया था । जब अधर्म बढ़ता है, तब पृथ्वी पर अन्न, जल, फल-मूल सबका ह्रास होने लगता है । दुर्भिक्ष, महामारी आदि उपद्रव अधर्म से ही होते हैं । अकाल पड़ने से प्रजा व्याकुल हो गयी । इसके कारण का पता लगाने के लिए राजा पृथु ध्यानस्थ हो गये । तब उन्हें पता चला कि पृथ्वी ने ही औषधियों और बीजों को ग्रस लिया है । अतः पृथ्वी को दंड देने के लिए उन्होंने अपने धनुष पर बाण चढ़ाया ।

पृथु को क्रुद्ध देख पृथ्वी गौ का रूप धारण करके भागी, किंतु जहाँ-जहाँ वह गयी, पृथु ने उसका पीछा किया । अंत में पृथ्वी ने उनकी

स्तुति करते हुए कहा : ''धर्मतत्त्व को जाननेवाले राजन् ! आप तो सभी प्राणियों की रक्षा करने में तत्पर हैं । मैं निरपराध हूँ । मुझ पर अनुग्रह कर पहले मेरी बात सुन लीजिये, फिर जैसा उचित हो, कीजिये । जिन औषधियों, धान्य आदि को स्वयं ब्रह्माजी ने उत्पन्न किया था उन्हें आचारभ्रष्ट, दुराचारी पुरुष भक्षण करने लगे और राजा लोगों ने मेरा पालन और आदर करना छोड़ दिया इसलिए सब लोग चोरों के समान हो गये हैं । इसीसे यज्ञ के लिए धान्य व औषधियों को मैंने अपने में छिपा लिया । अब अधिक समय हो जाने से अवश्य ही वे धान्य मेरे उदर में जीर्ण हो गये हैं । आप ऋषियों द्वारा बताये गये उपायों से उन्हें निकाल लीजिये । साथ ही वर्षा का जल वर्षा ऋतु बीत जाने के बाद भी मेरे ऊपर सर्वत्र रह सके, इसके लिए आपको मेरे पृष्ठभाग को समतल बनाना होगा ।''

पृथु ने समस्त धान्यों, औषधि-बीजों, अन्नादि का दोहन किया और सारे भूमंडल को समतल कर प्रजावर्ग के लिए निवास-स्थानों का विभाजन किया । फिर उन्होंने सौ अश्वमेध यज्ञों की दीक्षा ली । जब वे निन्यानवे यज्ञ पूरे कर सौवाँ करने लगे, तब इन्द्र ने उसमें विघ्न डालने हेतु ईर्ष्यावश उनके यज्ञ का घोड़ा चुरा लिया । दूसरा कोई सौ अश्वमेध यज्ञ करके इन्द्र न हो जाय, इस डर से वे यज्ञ का घोड़ा चुरा लेते थे । पृथु उन्हें दंड देने को उद्यत हुए तो ऋषियों ने कहा : ''महाराज ! यज्ञ-दीक्षा लेने पर किसीका वध करना उचित नहीं है । हम आपके शत्रु इन्द्र को अग्नि में आहुति डालकर भस्म कर देंगे ।''

ऋषिगण आहुति डालने लगे तो ब्रह्माजी ने प्रकट होकर उन्हें रोका और पृथु से कहा : ''राजन् ! आपको सौ यज्ञ करके इन्द्र तो होना नहीं है । आप तो भगवान के भक्त हैं । आपको तो मोक्ष प्राप्त करना है । अतः इस यज्ञ को अब बंद कर दें । देवराज इन्द्र पर आपको क्रोध नहीं करना चाहिए ।''

ब्रह्माजी की आज्ञा मानकर पृथु ने यज्ञ की वहीं पूर्णाहुति कर दी । उनके निन्यानवे यज्ञों से भगवान विष्णु को बड़ा संतोष हुआ । भगवान इन्द्रसहित वहाँ उपस्थित होकर पृथु से बोले : ''राजन् ! अब ये इन्द्र तुमसे क्षमा चाहते हैं । तुम इन्हें क्षमा कर दो । जो श्रेष्ठ मानव साधु और सद्बुद्धिसम्पन्न होते हैं, वे दूसरे जीवों से द्रोह नहीं करते । ज्ञानवान पुरुष इस शरीर को अविद्या, वासना और कर्मों का ही पुतला समझकर इसमें आसक्त नहीं होता । इस प्रकार जो इस शरीर में आसक्त नहीं है, वह विवेकी पुरुष इससे उत्पन्न हुए घर, पुत्र और धन आदि में भी किस प्रकार ममता रख सकता है !

यह आत्मा एक, शुद्ध, स्वयंप्रकाश, निर्गुण, गुणों का आश्रयस्थान, सर्वव्यापक, आवरणशून्य, सबका साक्षी एवं अन्य आत्मा से रहित है । अतः शरीर से भिन्न है । जो पुरुष इस देह-स्थित आत्मा को इस प्रकार शरीर से भिन्न जानता है, वह प्रकृति से संबंध रखते हुए भी उसके गुणों से लिप्त नहीं होता, क्योंकि उसकी स्थिति मुझ परमात्मा में रहती है । राजन् ! जो पुरुष किसी प्रकार की कामना न रखकर अपने वर्णाश्रम के धर्मों द्वारा नित्यप्रति श्रद्धापूर्वक मेरी आराधना करता है, उसका चित्त धीरे-धीरे शुद्ध हो जाता है । चित्त शुद्ध होने पर उसका विषयों से संबंध नहीं रहता तथा उसे तत्त्वज्ञान की प्राप्ति हो जाती है । फिर तो वह मेरी समतारूप स्थिति को प्राप्त हो जाता है । यही परम शांति, ब्रह्म अथवा कैवल्य है । जो पुरुष यह जानता है कि शरीर, ज्ञान, क्रिया और मन का साक्षी होने पर भी कूटस्थ आत्मा इनसे निर्लिप्त ही रहता है, वह कल्याणमय मोक्षपद प्राप्त कर लेता है ।'' (क्रमशः) ❐

अर्जुन और उर्वशी

अर्जुन सशरीर इन्द्र-सभा में गया तो उसके स्वागत में उर्वशी, रम्भा आदि अप्सराओं ने नृत्य किये । अर्जुन योद्धा होने पर भी नृत्य-संगीत जानता था । अर्जुन के रूप-सौंदर्य पर मोहित हो उर्वशी रात्रि के समय उसके निवासस्थान पर गयी और प्रणय-निवेदन किया तथा साथ ही 'इसमें कोई दोष नहीं लगता' इसके पक्ष में अनेक तर्क भी दिये किंतु अर्जुन ने अपने दृढ़ इन्द्रियसंयम का परिचय देते हुए कहा :

यथा कुन्ती च माद्री च शची चैव ममानघे ।
तथा च वंशजननी त्वं हि मेऽद्य गरीयसी ॥
गच्छ मूर्ध्ना प्रपन्नोऽस्मि पादौ ते वरवर्णिनि ।
त्वं हि मे मातृवत् पूज्या रक्ष्योऽहं पुत्रवत् त्वया ॥

'मेरी दृष्टि में कुंती, माद्री और शची का जो स्थान है, वही तुम्हारा भी है । तुम पुरुवंश की जननी होने के कारण आज मेरे लिए परम गुरुस्वरूप हो । हे वरवर्णिनि ! मैं तुम्हारे चरणों में मस्तक रखकर तुम्हारी शरण में आया हूँ । तुम लौट जाओ । मेरी दृष्टि में तुम माता के समान पूजनीया हो और पुत्र के समान मानकर तुम्हें मेरी रक्षा करनी चाहिए ।'

(महाभारत – वनपर्वणि इन्द्रलोकाभिगमन पर्व : ४६.४६,४७)

उर्वशी हाव-भाव से और तर्क देकर अपनी कामवासना तृप्त करने में विफल रही तो क्रोधित होकर उसने अर्जुन को एक वर्ष तक नपुंसक होने का शाप दे दिया । अर्जुन ने उर्वशी से शापित होना स्वीकार किया परंतु संयम नहीं तोड़ा । जो अपने आदर्श से नहीं हटता, धैर्य और सहनशीलता को अपने चरित्र का भूषण बनाता है, उसके लिए शाप भी वरदान बन जाता है । अर्जुन के लिए भी ऐसा ही हुआ । जब इन्द्र तक यह बात पहुँची तो उन्होंने अर्जुन से कहा : ''तुमने तो अपने इन्द्रियसंयम के द्वारा ऋषियों को भी पराजित कर दिया । तुम जैसे पुत्र को पाकर कुंती वास्तव में श्रेष्ठ पुत्रवाली है । उर्वशी का शाप तुम्हें वरदान सिद्ध होगा । भूतल पर वनवास के १३वें वर्ष में तुम्हें अज्ञातवास करना पड़ेगा, उस समय यह सहायक होगा । उसके बाद तुम अपना पुरुषत्व फिर से प्राप्त कर लोगे ।''

इन्द्र के कथनानुसार अज्ञातवास के समय अर्जुन ने विराट राजा के महल में नर्तक वेश में रहकर विराट की राजकुमारी को संगीत और नृत्य विद्या सिखायी थी, तत्पश्चात् वह शापमुक्त हुआ । परस्त्री के प्रति मातृभाव रखने का यह एक सुंदर उदाहरण है । ऐसा ही एक उदाहरण वाल्मीकिकृत रामायण में भी आता है । भगवान श्रीराम के छोटे भाई लक्ष्मण को जब सीताजी के गहने पहचानने को कहा गया तो लक्ष्मणजी बोले : ''हे तात ! मैं तो सीता माता के पैरों के गहने और नूपुर ही पहचानता हूँ, जो मुझे उनकी चरणवंदना के समय दृष्टिगोचर होते रहते थे; केयूर-कुंडल आदि दूसरे गहनों को मैं नहीं जानता ।''

यह मातृभाववाली दृष्टि ही इस बात का एक बहुत बड़ा कारण था कि लक्ष्मणजी इतने काल तक ब्रह्मचर्य का पालन किये रह सके । तभी रावणपुत्र मेघनाद को, जिसे इन्द्र भी नहीं हरा सका था, लक्ष्मणजी हरा पाये । पवित्र मातृभाव द्वारा वीर्यरक्षण का यह अनुपम उदाहरण है, जो ब्रह्मचर्य की महत्ता भी प्रकट करता है ।

भारतीय सभ्यता और संस्कृति में 'माता' को इतना पवित्र स्थान दिया गया है कि यह मातृभाव मनुष्य को पतित होने से बचा लेता है । श्री रामकृष्ण एवं अन्य पवित्र संतों के समक्ष जब कोई स्त्री कुचेष्टा करना चाहती, तब वे सज्जन, साधक, संत यह पवित्र मातृभाव मन में लाकर विकार के फंदे से बच जाते । यह मातृभाव मन को विकारी होने से बहुत हद तक रोके रखता है । जब भी किसी स्त्री को देखने पर मन में विकार उठने लगे, उस समय सचेत रहकर इस मातृभाव का प्रयोग कर ही लेना चाहिए । ❑

हनुमानजी की सेवानिष्ठा

⁂ हनुमान जयंती : ५ व ६ अप्रैल ⁂

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

सेवा क्या है ? जिससे किसीका आध्यात्मिक, शारीरिक, मानसिक हित हो वह सेवा है। सेवक को जो फल मिलता है वह बड़े-बड़े तपस्वियों, जती-जोगियों को भी नहीं मिलता। सेवक को जो मिलता है उसका कोई बयान नहीं कर सकता लेकिन सेवक ईमानदारी से सेवा करे, दिखावटी सेवा न करे। सेवक को किसी पद की जरूरत नहीं है, सच्चे सेवक के आगे-पीछे सारे पद घूमते हैं।

कोई कहे कि 'मैं बड़ा पद लेकर सेवा करना चाहता हूँ' तो यह बिल्कुल झूठी बात है। सेवा में जो अधिकार चाहता है वह वासनावान होकर जगत का मोही हो जाता है लेकिन जो सेवा में अपना अहं मिटाकर दूसरे की भलाई तथा तन से, मन से, विचारों से दूसरे का मंगल चाहता है और मान मिले चाहे अपमान मिले उसकी परवाह नहीं करता, ऐसे हनुमानजी जैसे सेवक की जन्मतिथि सर्वत्र मनायी जाती है। चैत्री पूर्णिमा हनुमान जयंती के रूप में मनायी जाती है।

हनुमानजी को तो जो चाहे सेवा बोल दो, 'भरत के पास जाओ' तो भरत के पास पहुँच जाते, 'संजीवनी लाओ' तो संजीवनी ले आते, समुद्र पार कर जाते। भारी इतने कि जिस पर्वत पर खड़े होकर हनुमानजी ने छलाँग मारी वह पाताल में चला गया। छोटे भी ऐसे बन गये कि राक्षसी के मुँह में जाकर आ गये। विराट भी ऐसे बन गये कि विशालकाय ! ब्रह्मचर्य का प्रभाव लँगोट के पक्के हनुमानजी के जीवन में चम-चम चमक रहा है।

लंका में हनुमानजी को पकड़ के लंकेश के दरबार में ले गये। हनुमानजी भयभीत नहीं हुए, उग्र भी नहीं हुए, निश्चिंत खड़े रहे। हनुमानजी की निश्चिंतता देखकर रावण बौखला गया। बौखलाते हुए हँस पड़ा, बोला : ''सभा में ऐसे आकर खड़ा है, मानो तुम्हारे लिए सम्मान-सभा है। तुमको पकड़ के लाये हैं, अपमानित कर रहे हैं और तुमको जरा भी लज्जा नहीं ! सिर नहीं झुका रहे हो, ऐसे खड़े हो मानो ये सारे सभाजन तुम्हारे सम्मान की गाथा गायेंगे।''

हनुमानजी ने रावण को ऐसा सुनाया कि रावण सोच भी नहीं सकता था कि हनुमानजी की बुद्धि ऐसी हो सकती है। हनुमानजी तो प्रीतिपूर्वक सुमिरन करते थे, निष्काम भाव से सेवा करते थे। बुद्धियोग के धनी थे हनुमानजी। हनुमानजी ने सुना दिया :

''मोहि न कछु बाँधे कइ लाजा।

मुझे अपने बाँधे जाने की कुछ भी लज्जा नहीं है। तुम बोलते हो कि निर्लज्ज होकर खड़ा हूँ, यह लाज-वाज का जाल मुझे बाँध नहीं सकता।

कीन्ह चहउँ निज प्रभु कर काजा ॥

मैं तो प्रभु का कार्य करना चाहता हूँ। चाहे बँधकर तुम्हारे पास आऊँ, चाहे आग लगाते हुए तुम्हारे यहाँ से जाऊँ, मुझे तो भगवान का कार्य करना है। मुझे लाज किस बात की ? मैं तो टुकुर-टुकुर देख रहा हूँ। तुमने मेरे स्वागत की सभा की हो या अपमान की सभा - यह तुम जानो, मैं तो निश्चिंत हूँ। मैं प्रभु के कार्य में सफल हो रहा हूँ।'' सेवक अपने स्वामी का, गुरु का, संस्कृति का काम करे तो उसमें लज्जा किस बात की ! सफलता का अहंकार क्यों करे, मान-अपमान का महत्त्व क्या है ?

यह सुन क्रोध में आ के रावण ने हनुमानजी की पूँछ में कपड़ा बाँधकर आग लगाने को कहा।

हनुमानजी ने पूँछ लम्बी कर दी, अब इन्द्रजीत कहता है : ''इस पूँछ को हम ढँक नहीं सकते इतनी लम्बी पूँछ कर दी इस हनुमान ने। कहीं यह पूँछ लम्बी होकर लंका में चारों तरफ फैलेगी तो लंका भी तो जल सकती है !'' घबरा गया इन्द्रजीत। हनुमानजी ने पूँछ छोटी कर दी तो ढँक गयी। दैत्य बोलते हैं : ''हमने पूँछ ढँक दी, हमने सेवा की।''

जो दैत्यवृत्ति के होते हैं वे सेवा के नाम से अहंकार का चोला पहनते हैं लेकिन हनुमान-वृत्तिवाले सेवा के नाम पर सरलता का अमृत बरसाते हैं।

तो हनुमानजी ने पूँछ को सिकोड़ भी दिया लेकिन उनके पिता हैं वायुदेव, उनसे प्रार्थना की : ''पिताश्री ! आपका और अग्नि का तो सजातीय संबंध है, पवन चलेगा तो अग्नि पकड़ेगी। हे वायुदेव और अग्निदेव ! थोड़ी देर अग्नि न लगे, धुआँ हो - ऐसी कृपा करना।''

राक्षस फूँकते-फूँकते अग्नि लगाने की मेहनत कर रहे थे। रावण ने कहा : ''देखो ! अग्नि क्यों नहीं लग रही ? हनुमान तुम बताओ।''

हनुमानजी ने कैसी कर्मयोग से सम्पन्न बुद्धि का परिचय दिया ! बोले : ''ब्राह्मण को जब बुलाते हैं, आमंत्रित करते हैं तभी ब्राह्मण भोजन करते हैं। अग्निदेव तो ब्राह्मणों के भी ब्राह्मण हैं। यजमान जब तक शुद्ध होकर अग्नि देवता को नहीं बुलाता, तब तक अग्नि कैसे लगेगी ? तुम तुम्हारे दूतों के द्वारा लगवा रहे हो। तुम खुद अग्निदेव को बुलाओ। वे तो एक-एक मुख से फूँकते हैं, तुम्हारे तो दस मुख हैं।'' देखो, अब हनुमानजी को ! सेवक स्वामी का यश बढ़ाता है।

हनुमानजी ने कहा : ''एक-एक फूँक मारकर उसमें थूक भी रहे हो तो अशुद्ध आमंत्रण से अग्निदेव आते नहीं। तुम तो ब्राह्मण हो, पुलस्त्य कुल में पैदा हुए हो, पंडित हो।'' मूर्ख को उल्लू बनाना है तो उसकी सराहना करनी चाहिए और साधक को महान बनाना हो तो उसको प्रेमपूर्वक या तो डाँट के, टोक के, उलाहने से समझाना चाहिए।

रावण को लगा कि 'हनुमानजी की युक्ति तो ठीक है। चलो, अब हम स्वयं अग्नि लगायेंगे।' रावण ने अंजलि में जल लिया, हाथ-पैर धोये। अब रावण ने पूरा घी छँटवा दिया, **'ॐ अग्नये स्वाहा।'** करके अग्नि देवता का आवाहन किया और बोला : ''दस-दस मुख से मैं फूँकूँगा तो अग्नि बिल्कुल प्रज्वलित हो जायेगी ! राक्षस फूँक रहे हैं तो अग्नि प्रज्वलित नहीं हो रही है। धुआँ नाक में, आँखों में जाने से राक्षस परेशान-से हो गये हैं, उन्हें जलन हो रही है।''

रावण के मन में पाप था, बेईमानी थी कि 'दस मुखों से ऐसी फूँक मारूँगा कि पूँछ के साथ हनुमानजी भी जल जायें। इसको जलाने से मेरा यश होगा कि रामजी का खास मंत्री, जिसने छलाँग मारी तो पर्वत ऐसा दबा कि पाताल में चला गया, ऐसे बहादुर हनुमान को जिंदा जला दिया !'

अब मन में बेईमानी है और अग्नि देवता का सेवक बन रहा है। फूँक तो मारी लेकिन हनुमानजी तो क्या जलें, उस आग में उसकी दाढ़ी और मूँछें जल गयीं, नकटा हो गया। जो सेवा का बहाना करके सेवा करता है उसकी ऐसी ही हालत होती है। ❐

व्रत, पर्व और त्यौहार

२३ मार्च : राष्ट्रीय चैत्री नूतन वर्ष वि.सं. २०६९ प्रारम्भ, गुडी पड़वा (वर्ष के साढ़े तीन शुभ मुहूर्तों में से एक), चैत्री नवरात्र प्रारम्भ

२४ मार्च : चेटीचंड

१ अप्रैल : श्रीराम नवमी, रविपुष्यामृत योग (सुबह ९-१२ से २ अप्रैल सूर्योदय तक)

७ अप्रैल : विश्व स्वास्थ्य दिवस

१० अप्रैल : मंगलवारी चतुर्थी (सूर्योदय से दोपहर ११-०१ तक)

११ अप्रैल : विश्ववंदनीय पूज्य संत श्री आशारामजी बापू का ७२वाँ अवतरण दिवस

दिव्य संस्कार से दिव्य जीवन

(पूज्य बापूजी का ७२वाँ अवतरण दिवस : ११ अप्रैल)

(पूज्य बापूजी की मधुर वाणी)

मेरी नानी मर गयी थी तो श्मशान में ले गये । श्मशान में जाकर अर्थी पर हिलचाल होती देख रस्सियाँ खोलीं तो नानी उठ गयी और पैदल चलकर घर आयी ।

हम लगभग १०-१२ साल के थे तब नानी से पूछते थे : ''नानी ! तुम मर गयी थी फिर क्या हुआ था ?''

नानी ने बताया कि ''क्या पता क्या हुआ ? लेकिन मैंने उधर देखा कि यह तो नरक है ! ये यमदूत हैं तो मैंने कहा : मुआ ! मेरे को इधर क्यों लाये ? मैंने तो ॐकारवाला गुरुमंत्र लिया है फिर मेरे को नरक में क्यों लाये ? यहाँ तो पापियों को लाया जाता है ।''

यमदूत ने पूछा : ''अरे, तुम्हारा नाम हेमीबाई है न ?''

नानी बोली : ''हाँ, लेकिन हेमीबाई तो हमारे टंडा आदम में हजारों होंगी, कौन-सी हेमीबाई ?''

यमदूत बोला : ''हेमीबाई पोहूमल ?''

देखो, मौत के समय भी हौसला बुलंद है नानी का ! यमपुरी में यमदूतों को डाँटती है । मेरी नानी ऐसी जबरदस्त, मजबूत थी ।

नानी बोली : ''नहीं, नहीं । पोहूमल-फोहूमल हमारे पति का नाम नहीं है ।''

''तो तुम्हारे पति का क्या नाम है बोलो न ?''

''हम लोग नहीं बोलते पति का नाम, 'प' पर है तुम बोलते जाओ !''

''हेमीबाई प्रेमकुमार ?''

''नहीं, कुमार हटा दे, पीछे चंद लगा दे ।''

''हेमीबाई प्रेमचंद ?''

''हाँ बेटे हाँ ! तेरा भला हो ।''

यमराज बोले : ''अरे, यह तो हेमीबाई प्रेमचंद है, हेमीबाई पोहूमल को लाना था ! जाओ, इन्हें जल्दी छोड़कर आओ ।''

फिर मेरे को इस शरीर में छोड़ गये तो मैं उठकर चल के आयी ।''

तो मेरी नानी ने यमपुरी में यमदूतों व यमराज को डाँटा और यमराज ने अपनी गलती मानकर फिर नानी के प्राण वापस भेजे । उसके बाद नानी ३९ साल तक और जीवित रही । यह सत्य-घटना है, कपोल-कल्पित बात नहीं है । उस जमाने का मैं स्वयं साक्षी हूँ । मेरी माँ तो मर गयी, मामा मर गये, मौसी भी मर गयी । ७० साल की तो मेरी मौसी थी तब तक नानी जीवित थी । लम्बी उम्र तक जीवित रही नानी, १०० साल से भी ज्यादा उम्र पार की होगी ।

शरीर मरता है पर उसके बाद भी तुम रहते हो । स्वर्ग में जाना है, नरक में जाना है, दूसरा शरीर लेना है तो तुम रहते हो न ! तुम्हारी मौत नहीं होती । बेवकूफी से मृत्यु का भय लगता है । जो आत्मा सो परमात्मा । आत्मा-परमात्मा एक है तो मरने का डर छोड़ दो, तुम मर ही नहीं सकते हो । तुमको भगवान भी नहीं मार सकते हैं ।

जो यमपुरी में जाने के बाद भी दम मार के यमराज से अपना जीवन ले आयी, उस नानी का मैं दोहता (नाती) हूँ ।

जिन्होंने नीम के पेड़ को आज्ञा देकर चला दिया, जिससे मुसलमान भाइयों ने जिन्हें आदर से 'साँईं लीलाशाह' नाम से सम्बोधित किया, ऐसे लीलाराम में से 'साँईं लीलाशाहजी बापू' बने महापुरुष का तो मैं शिष्य हूँ । जो नीम के पेड़ को

आज्ञा करके स्थानांतरित कर देते हैं कि 'सही जगह पर जाकर रह !' उन महाप्रभु का मैं प्यारा हूँ । हमारे खून की परम्परा कैसी है देखो !

तुम्हारे बापू का जन्म तो सुबह होनेवाला था, प्रसूति करानेवाली दाई भी आ गयी थी लेकिन माँ ने मंदिर में जाकर भगवान को बोला कि 'प्रभु ! अभी प्रसूति न हो, मुझे अभी छाछ-दही आदि बाँटना है । बाँटने की मेरी सेवा पूरी हो जाने दो । आज के दिन मेरी यह सेवा रह न जाय इसलिए मेरी प्रसूति की पीड़ा को तुम रोक दो ।'

तो भगवान ने तुम्हारे बापू को आने से रोक दिया । माँ जब सब काम करके निवृत्त हुई, फिर दाई को बोली : ''अब चल ।''

माँ बताती थी कि 'फिर आराम से प्रसूति हुई और तुम्हारी प्रसूति के एक दिन पहले कोई अजगैबी सौदागर एक बड़ा झूला लेकर आया था ।' झूला भी इतना लम्बा-चौड़ा, बढ़िया पलंग जैसा था । वह झूला हमारे लिए आया था । वह स्मृति हमको अभी भी है । उसमें नवार की खाट थी जो सारी अंदर घुस जाय और नवार का झूला था । बच्चा भी झूले, बाप भी झूले, माँ भी झूले इतना लम्बा-चौड़ा था । अभी तो चित्रकार कल्पना करके छोटा-सा बना के दिखा देते हैं । इतना जरा-सा नहीं था । अभी उस झूले को देखना असम्भव है। पूरा पलंग भी छोटा पड़ता है । आजकल के पलंग भी छोटे होते हैं । इतना बड़ा झूला था कि तीन-चार आदमी अंदर लेट सकें ।

मेरे पिताजी नगरसेठ थे, जमींदार थे, खूब सम्पदावान थे । सौदागर देने आया तो बोले : ''हम तो नहीं लेते ।''

वह बोला : ''तुम्हारे घर बालक आनेवाला है इसलिए झूला लाया हूँ ।''

''तुम क्यों झूला दोगे ?''

''मुझे रात को सपना आया था ।''

भगवान ने मेरे लिए सौदागर के द्वारा पहले झूला भेजा, बाद में मेरा जन्म हुआ । ऐसे भगवान का तो मैं प्यारा हूँ ।

ऐसा नहीं कि मैं अकेला प्यारा हूँ, तुम भी हो । हम सभी उसके प्यारे हैं । जो उसको जितना मानता है वह उसके लिए उतना प्यारा हो जाता है । मैं तो हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ कि आप भगवान को अपना मानो, वे आपके अपने प्यारे हैं तो आप मेरे से भी ज्यादा आगे निकल सकते हो । भगवान को अपना मानो, प्यारा मानो तो भगवान आपको बुद्धियोग देंगे । फिर 'गुरु तो गुड़ रह जायेगा, चेला शक्कर बन जायेगा', पर हमें आनंद होगा । ❐

बापू के बच्चे, पक्के और अच्छे

पूज्य बापूजी के मार्गदर्शन में देश भर में चल रहे गुरुकुलों में विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास हो रहा है, जिसकी सुवास अब दूर-दूर तक फैलने लगी है । अहमदाबाद गुरुकुल के बच्चों ने वर्ष भर सराहनीय प्रदर्शन कर संस्कारों की सुवास फैलायी है ।

राज्य सरकार द्वारा आयोजित २६ जनवरी २०१२ के गणतंत्र दिवस समारोह पर अहमदाबाद गुरुकुल के विद्यार्थियों ने योगासन और पिरामिड में शानदार प्रदर्शन किया । यह खबर समाचार पत्रों में छायी रही ।

गणित-विज्ञान प्रदर्शनी : गणित-विज्ञान प्रदर्शनी में 'पानी से चलनेवाली गाड़ी' नामक प्रोजेक्ट राज्य स्तर तक प्रदर्शित होकर सराहनीय रहा ।

खेल महाकुम्भ : 'गुजरात खेल महाकुम्भ' में अहमदाबाद गुरुकुल के विद्यार्थियों का प्रदर्शन सराहनीय रहा । विद्यार्थियों ने कुश्ती, हैन्डबॉल व रस्सा-खींच प्रतियोगिताओं में जिला व राज्य स्तर में जीतकर १,०४,००० रुपये इनाम के रूप में प्राप्त किये । ❐

स्वास्थ्य-प्रदायक नीम

'निम्बति-स्वास्थ्य ददाति' अर्थात् जो निरोग कर दे, स्वास्थ्य प्रदान करे वह है 'नीम'। नीम वृक्ष के पंचांग - पत्ते, फूल, फल, छाल एवं जड़ यानी सम्पूर्ण वृक्ष ही औषधीय गुणों से भरपूर है। नीम की छाया भी स्वास्थ्यप्रद है। अतः इसकी छाया व हवा में विश्राम करना श्रेयस्कर है। नीम ठंडा, कड़वा, कसैला, पित्त व कफशामक परंतु वातवर्धक है।

नीम के पत्ते : उत्तम जीवाणुनाशक व रोगप्रतिकारक शक्ति को बढ़ानेवाले हैं। नीम की कोंपले चबाने से रक्त की शुद्धि होती है। पत्तियों का १-१ बूँद रस आँखों में डालने से आँखों को ठंडक व आराम मिलता है तथा मोतियाबिंद से आँखों की रक्षा होती है। रस में मिश्री मिलाकर पीने से शरीर की गर्मी शांत हो जाती है। चुटकी भर पिसा हुआ जीरा, पुदीना और काला नमक मिलाकर पीने से अम्लपित्त (एसीडिटी) में राहत मिलती है। यह शरबत हृदय को बल व ठंडक पहुँचाता है। उच्च रक्तचाप में एक सप्ताह तक रोज सुबह रस पीयें, फिर २ दिन छोड़कर १ सप्ताह लगातार पीने से लाभ होता है। नीम के रस में २ ग्राम रसायन चूर्ण मिलाकर पीना स्वप्नदोष में लाभदायी है।

नीम की पत्तियों का रस शहद के साथ देने से पीलिया, पांडुरोग व रक्तपित्त (नाक, योनि, मूत्र आदि द्वारा रक्तस्राव होना) में आराम मिलता है।

फिरंग (सिफिलिस) व सूजाक (गोनोरिया) में भी नीम की पत्तियों का रस विशेष लाभदायी है।

विषैला पदार्थ पेट में चला गया हो तो नीम का रस पिलाकर उलटी कराने से आराम मिलता है। नीम रक्त व त्वचा की शुद्धि करता है। अतः दाद, खाज, खुजली आदि त्वचारोगों में नीम के पंचांगों का काढ़ा अथवा रस पिलायें तथा नीम का तेल लगायें। पत्तियाँ दही में पीसकर लगाने से दाद जड़ से नष्ट हो जाती है।

❇ बहुमूत्रता (बार-बार पेशाब होना) में भी नीम के रस में आधा चम्मच हल्दी का चूर्ण मिलाकर पीना लाभदायी है।

❇ नीम दाहशामक है। बुखार में होनेवाली जलन अथवा हाथ-पैरों की जलन में नीम की पत्तियाँ पीसकर लगाने से ठंडक मिलती है।

❇ नीम की पत्तियों के रस में शहद मिलाकर पिलाने से पेट के कृमि नष्ट होते हैं।

❇ चेचक में नीम की पत्तियों का रस शरीर पर मलें। रस को गुनगुना करके सुबह-दोपहर-शाम पिलायें। बिस्तर पर पत्तियाँ बिछा दें तथा दरवाजे और खिड़कियों पर भी बाँध दें।

सभी प्रयोगों में रस की मात्रा : २० से ३० मि.ली.

नीम की आंतर छाल (अंदर की छाल) : ३ ग्राम पिसी हुई छाल व ५ ग्राम पुराना गुड़ मिलाकर खाने से बवासीर में आराम मिलता है। इससे ज्वर भी शांत हो जाता है। छाल पीसकर सिर पर लगाने से नकसीर बंद हो जाता है।

नीम के फूल : ताजे फूलों का २० मि.ली. रस पीने से फोड़े-फुंसियाँ मिट जाती हैं। चैत्र महीने (९ मार्च से ६ अप्रैल तक) में १५ दिन तक सुबह फूलों का रस पीयें। इन दिनों बिना नमक का भोजन करें, खट्टे, तीखे व तले हुए पदार्थ न खायें। इससे सभी प्रकार के त्वचा-विकारों में लाभ होता है और रोगप्रतिकारक शक्ति भी बढ़ती है।

निबौली (नीम का फल) : अप्रैल-मई में

जब ताजे फल लग जाते हैं तब पकी हुई १० निबौलियाँ रोज खायें। इससे रक्त की शुद्धि होती है तथा भूख भी खुलकर लगती है। निबौली की चटनी भी स्वादिष्ट व स्वास्थ्यवर्धक है। यह अर्श (बवासीर) नाशक है।

नीम की टहनी : १ अंगुल मोटी व ८-१० इंच लम्बी सीधी टहनी तोड़कर उसके अग्रभाग को दाँतों से चबाकर दातुन बनायें। उससे दातुन करने से दाँत स्वच्छ, चमकीले व मजबूत बनते हैं तथा मसूड़े व दाँतों के रोग नहीं होते। मुँह के कैंसर की तेजी से बढ़ती हुई समस्या को यह प्रयोग नियंत्रित कर सकता है। यह दाँत के कृमियों को नष्ट करता है।

बाह्य प्रयोग : नीम की छाल का काढ़ा बनाकर उससे घाव धोने से वह जल्दी भर जाता है।

पुराने घाव तथा मधुमेहजन्य घाव (Diabetic ulcers), चर्मरोग, पैरों के तलुए की जलन आदि समस्याओं में नीम तेल लगाने से लाभ होता है। दाँतों की सड़न में नीम के पंचांग काढ़े से कुल्ले करने से राहत मिलती है।

नीम के पेड़ के नीचे पड़े हुए सूखे पत्ते व शाखाओं का धुआँ करने से वायुमंडल शुद्ध और स्वच्छ रहता है। ❐

औषधीय गुणों से सम्पन्न : अनन्नास

अनन्नास पाचक तत्त्वों से भरपूर, शरीर को शीघ्र ही ताजगी देनेवाला, हृदय व मस्तिष्क को शक्ति देनेवाला, कृमिनाशक, स्फूर्तिदायी फल है। यह वर्ण में निखार लाता है। गर्मी में इसके उपयोग से ताजगी व ठंडक मिलती है। अनन्नास के रस में प्रोटीनयुक्त पदार्थों को पचाने की क्षमता है। यह आँतों को सशक्त बनाता है। पर इन सबके लिए अनन्नास ताजा होना आवश्यक है। टीन के डिब्बों में मिलनेवाला अनन्नास का रस स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। (क्रमशः) ❐

'मातृ-पितृ पूजन दिवस' को राज्यस्तरीय पर्व के रूप में मनाने का

अपने राज्य की बाल एवं युवा पीढ़ी तथा समस्त जनता के कल्याण की पवित्र सद्भावना से ओत-प्रोत छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री एवं शिक्षामंत्री ने पूज्य बापूजी के 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' मनाने के आह्वान को शिरोधार्य करते हुए इसे प्रतिवर्ष पूरे राज्य में मनाने की घोषणा की । माता-पिता के सम्मान के दिव्य संस्कारों का आदर कर ऐसा स्वर्णिम इतिहास रचनेवाले पहले राज्य के रूप में छत्तीसगढ़ का नाम हमेशा याद किया जायेगा ।

प्रस्तुत है नवभारत, हरिभूमि एवं अन्य समाचार पत्रों में प्रकाशित मुख्यमंत्री एवं शिक्षामंत्री द्वारा राज्य की जनता के नाम दिया गया संदेश :

संदेश

परम पूज्य संत श्री आशारामजी बापू का देशव्यापी आह्वान है कि १४ फरवरी को बच्चे-बच्चियाँ अपने माँ-बाप की पूजा-अर्चना करके इस दिन को 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' के रूप में मनायें । संस्कार धरोहर का संरक्षण-संवर्धन करने हेतु पूरा छत्तीसगढ़ १४ फरवरी को 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' मनायेगा । इस दिन विद्यालय-महाविद्यालयों के शिक्षक एवं प्राध्यापक विद्यार्थियों के माता-पिता को आमंत्रित करें और सामूहिक रूप से मातृ-पितृ पूजन दिवस मनायें । इससे छात्रों में **'मातृदेवो भव । पितृदेवो भव । आचार्यदेवो भव ।'** की दिव्य भावना सुदृढ़ होगी और उनके कोमल मन पर इस शुभ संस्कार का ऐसा प्रभाव पड़ेगा जो उनके जीवन में उज्ज्वल चरित्र-निर्माण की आधारशिला सिद्ध होगा। इसीके फलस्वरूप राज्य एवं पूरे राष्ट्र का नाम रोशन करनेवाली भावी पीढ़ी का निर्माण होगा ।

मैं पूरे छत्तीसगढ़ के सरकारी तथा गैर सरकारी विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में १४ फरवरी को मातृ-पितृ पूजन कार्यक्रम मनाये जाने की अपेक्षा करता हूँ ।

डॉ. रमन सिंह
मुख्यमंत्री, छत्तीसगढ़

संदेश

धर्म एवं संस्कार हमारे देश का मेरुदंड है। १४ फरवरी को अपने माँ-बाप की पूजा-अर्चना करके हमें इस दिन को 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' के रूप में मनाना है -

हर माता कौशल्या है, हर पुत्र बन जाये राम ।
१४ फरवरी को सब, मातृ-पितृ को करें प्रणाम ॥

राज्य के सभी विद्यालयों में १४ फरवरी को 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' का आयोजन कर दिव्य भावना को जन-जन तक पहुँचायें ।

जीवन हो जायेगा चंदन,
मातृ-पितृ का कर लो वंदन ।

संस्कार-संस्कृति के समन्वय का मूलमंत्र माता-पिता के आशीर्वाद में है, जिसका सम्मान करते हुए हमने १४ फरवरी 'विश्व प्रेम दिवस' को 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' के रूप में मनाने का निर्णय लिया है ।

अतः १४ फरवरी को 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' सभी विद्यालयों में समारोहपूर्वक आयोजित करने की अपेक्षा के साथ...

बृजमोहन अग्रवाल
शिक्षामंत्री, छत्तीसगढ़

संस्था समाचार

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

३ कि.मी. तक कतार... बड़ी ही श्रद्धा से कतारबद्ध खड़े भक्त-हृदयों में संत-दर्शन और ज्ञानामृत-पान करने की तड़प... जैसे ही पूज्य बापूजी की गाड़ी निकट आयी अपलक नेत्रों से दर्शन करते, बापूजी के हाथों से प्रसाद प्राप्त करते ग्रामीण... यह दृश्य है **२९ जनवरी** की **सुबह राजस्थान** के **चितौड़गढ़** जिले के एक छोटे-से कस्बे **निकुम्भ** का, जहाँ बापूजी का सत्संग पहली बार हुआ। बापूजी के सत्संग-दर्शन की खबर पाकर ग्रामीणों का सैलाब निकुम्भ की ओर उमड़ पड़ा। जिसे जो साधन मिला उसीमें सवार होकर वह सत्संग-स्थल पहुँच गया। कोई ट्रैक्टर से तो कोई जीप से, कोई बस से तो कोई सुबह-सुबह पैदल ही निकल पड़े। यहाँ पूज्यश्री बोले : ''माँ-बाप की निंदा नहीं सुननी चाहिए । माता-पिता, गुरु और अपने धर्म की निंदा जो सुनता है वह मनुष्यरूप में राक्षस है, तुच्छ है ।''

२९ जनवरी (शाम) को ऐतिहासिक नगरी **चित्तौड़गढ़** में बापूजी के सान्निध्य में श्रद्धालुओं ने रविवारी सप्तमी के विशेष जप का लाभ तो लिया ही, साथ ही बापूजी की अमृतवाणी से दिल को ध्यान, भक्ति और ज्ञानामृत से भरके यह शाम प्रभु के नाम की।

३० जनवरी को **नीमच (म.प्र.)** के **जीरन** में एक दिवसीय सत्संग में बड़ी ही सहजता से शास्त्रों के गूढ़ रहस्यों को समझाते हुए बापूजी ने कहा : ''जो सत्संग सुनेगा उसको सभीमें अपना परमेश्वर दिखेगा। सभीमें अपना परमेश्वर दिखेगा तो सुखी लोगों को देखकर वह सुखी होगा, दुःखी लोगों को देखकर वह द्रवित होगा। सुखी को सुखी देखकर आप अंदर से सुखी हो रहे हैं और दुःखी को दुःखी देखकर आप द्रवित हो रहे हैं तो उसका भी एक रस है । यह रस आपको परम शांति की तरफ ले जायेगा ।''

३१ जनवरी को आदिवासी-बाहुल्य क्षेत्र **प्रतापगढ़ (राज.)** में हुए सत्संग में जहाँ बड़ी संख्या में दूर-दराज से आदिवासी बंधु पहुँचे, वहीं नगरवासियों ने भी सत्संग का लाभ लिया । यहाँ पूज्यश्री बोले : ''संसार को जानकर उसकी पोल समझ लो कि वह धोखे से भरा है, गंदगी से भरा है । कितनी भी सुंदर-सुंदरियाँ हों, नाक में कफ भरा है, मुँह में थूक भरी है, मल-मूत्र भरा है, कपट भरा है, धोखाधड़ी भरी है । संसार को जानकर अपनी आसक्ति मिटाओ और भगवान को मानकर अपनी प्रीति जगाओ तो भगवान प्रकट हो जायेंगे ।''

१ फरवरी को **(सुबह ८.३० से) सीतामऊ, जि. मंदसौर (म.प्र.)** वासियों ने सत्संग-अमृत का प्रसाद पाकर धन्यता का अनुभव किया । यहाँ बापूजी ने कहा : ''हम बेवकूफी से मरनेवाले शरीर को 'मैं' मानते हैं और जीवन को जानते नहीं । जीवन तो जीवन ही है । जीवन में मौत नहीं है और मौत में जीवन नहीं है । कितना भी सँभालो, शरीर तो मरेगा । सुख-दुःख भी मरता है । 'मैं दुःखी हूँ'- यह सोचना तुच्छ जीवन है । 'मैं दुःख को जानता हूँ'- यह विचार, समझ दिव्य जीवन है ।''

वैसे तो **मंदसौर (म.प्र.)** अफीम के लिए प्रसिद्ध है परंतु **१ फरवरी** को **(सुबह १० से)** यहाँ उमड़े जनसैलाब ने तो मादकता और नशे का अर्थ ही बदल दिया और बापूजी की अमृतवाणी का पान कर प्रभुनाम की मस्ती से मस्त हो गये । बापूजी ने अपने चिरपरिचित अंदाज में ज्ञानामृत का पान कराते हुए कहा :

''भाँग भसूड़ी सुरा पान उतर जाये प्रभात ।
नाम नशे में नानका छका रहे दिन रात ॥''

१ फरवरी को **(दोपहर ४.३० से) बड़नगर (म.प्र.)** में सत्संग हुआ । यहाँ बापूजी के आगमन से सम्पूर्ण नगर भक्तिमय हो गया ।

२ (शाम) व ३ फरवरी को **विक्रोली, मुंबई** के लोगों ने प्रेमसिंधु बापूजी की स्नेहवर्षा में स्नान किया। कहा जाता है : **संत हृदय नवनीत समाना ।** 'संतों का हृदय मक्खन के समान होता है ।' परंतु

मक्खन तो ताप और गर्मी से पिघलता है जबकि बापूजी का हृदय तो भक्त की पुकारमात्र से पिघलकर कारुण्यभाव से भर जाता है। ऐसा ही देखने को मिला विक्रोली के सत्संग में, जहाँ **३ फरवरी** को बापूजी का सत्संग निर्धारित था किंतु भक्तहृदयों की पुकार के वश होकर कारुण्यसिंधु बापूजी यहाँ **२ फरवरी** की शाम को ही सत्संग-अमृत का पान कराने पहुँच गये। पूज्यश्री बोले : ''श्रीविष्णुसहस्रनाम में आता है कि गुरु भी परमात्मा का ही एक नाम है। गुरु माने जो लघु शरीर से, लघु संसार से आसक्ति मिटाकर अपने ज्ञान में जगा दें। वे भगवान ही तो हैं। गुरु के द्वारा भगवान ही कृपा करते हैं। बापू का तो यह शरीर दिखता है लेकिन बोलने की सत्ता किसकी है ? और कृपा करने की सत्ता किसकी है ? उसी बापुओं के बापू की... ऐ है !...''

४ फरवरी (सुबह) को **सामरखा, जि. आणंद (गुज.)** में शिव मंदिर के जीर्णोद्धार के अवसर पर पूज्य बापूजी का सत्संग व भंडारा हुआ। बापूजी ने यहाँ भगवान के वास्तविक स्वरूप का वर्णन करते हुए बाहर के मंदिर के साथ ही हृदय-मंदिर में आने का ज्ञान दिया।

एक ही स्थान पर सभी पूनम व्रतधारियों के पहुँचने में उनका धन, समय और शक्ति खर्च न हों इसलिए बापूजी ने स्वयं असुविधा सहते हुए तीन स्थानों पर पूनम-दर्शन प्रदान किया, जिसकी शुरुआत आणंद से हुई। **४ शाम व ५ फरवरी** को पूनम के सत्संग-अमृत का पान कर **आणंद (गुज.)** वासियों के दिल वास्तविक आनंद से भर गये। यहाँ बापूजी ने कहा : ''आपका जीवन जीवनदाता से एकदम ओतप्रोत है। उस जीवन का आप थोड़ा-सा ज्ञान सुन लीजिये, विचार लीजिये, अपने व्यवहार में थोड़ा-सा उसका सम्पुट दे दीजिये। संसार दुःखरूप नहीं है। संसार सुखरूप भी नहीं है। संसार तो एक नर्तक परमेश्वर की नाट्यशाला है। नित्य उसमें लीला हो रही है। आप हँसते-खेलते, खाते-पीते उस लीलाधर की लीला में सम्मिलित हो जाइये।''

५ (शाम) व ६ फरवरी (सुबह) को **अहमदाबाद आश्रम** में हुए पूर्णिमा दर्शन-सत्संग में पूज्यश्री ने कहा : ''ब्रह्म माना विभु। कृष्ण भगवान तो इतने हैं, राम भगवान, शिव भगवान इतने हैं लेकिन कृष्ण भगवान का कृष्ण तत्त्व या लीलाशाहजी बापू का लीलाशाह तत्त्व तो व्यापक, विभु है। ऐसे तुम्हारा भी तत्त्व वही है - व्यापक, विभु। उसे जानते हैं तो महापुरुष हो गये, निर्लेप पुरुष हो गये। जो जितना उसमें स्थित होता है, वह उतना ही बड़ा आदमी हो जाता है।''

६ (दोप.) व ७ फरवरी को **नोयडा (उ.प्र.)** में हुए पूर्णिमा दर्शन व सत्संग कार्यक्रम में जहाँ एक ओर विद्यार्थियों के लिए राष्ट्रीय स्तर की 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश ज्ञान प्रतियोगिता' का आयोजन हुआ, वहीं दूसरी ओर 'प्रेरणा सभा' में आये हुए विभिन्न धर्मों के धर्माचार्यों ने पूज्य बापूजी की प्रेरणा से १४ फरवरी को 'मातृ-पितृ पूजन दिवस' के रूप में मनाने की अनुशंसा की तथा 'वेलेंटाईन डे' के दूरगामी घातक परिणामों से समाज को सावधान किया। यहाँ पूज्य बापूजी बोले : ''तुम जो माँगो वह दे दें तो यह भगवान की बिल्कुल शुरुआत की कृपा है। भगवान अत्यंत प्रसन्न हो जायें तो आशीर्वाद देंगे कि जाओ ! ब्रह्मज्ञानी गुरु के पास।''

९ (शाम) से १२ फरवरी तक **राजिम, जि. रायपुर (छ.ग.)** में हुए **ध्यान-योग साधना शिविर** में श्रद्धालुओं का ऐतिहासिक सैलाब उमड़ा। बापूजी के इस साधना शिविर ने राजिम कुम्भ में जहाँ एक नया अध्याय जोड़ दिया, वहीं सामाजिक समरसता, आध्यात्मिक प्रेरणा व युवाओं में भारतीय संस्कृति के संस्कार भरने का एक नया सोपान भी तय किया।

शुक्रवार को छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह पूज्य बापूजी के सान्निध्य में चल रहे शिविर में शामिल हुए। उन्होंने छत्तीसगढ़ की ढाई करोड़ जनता की सुख-समृद्धि के लिए आशीर्वाद माँगा तथा बापूजी की प्रेरणा से प्रेरित होकर पूरे राज्य के सभी विद्यालय-महाविद्यालयों में १४ फरवरी को

'मातृ-पितृ पूजन दिवस' हर वर्ष मनाने की घोषणा कर छत्तीसगढ़ की जनता के लिए एक स्वर्णिम पहल की । जीव को अपने परमेश्वर स्वभाव में जगने का ज्ञान देते हुए पूज्य बापूजी बोले : ''जीव अपने परमेश्वर स्वभाव का ज्ञान सुनकर अपनी तुच्छता छोड़ देता है, विकार-वासना अपने में नहीं मानता, विकार-वासनावाले मन से समझौता नहीं करता, राग-द्वेषवाली बुद्धि की बातों में नहीं आता अपितु भगवान और भगवान के प्रिय संतों के सत्संग के द्वारा अपना ज्ञान, अपनी समझ, अपनी मान्यता बनाकर भगवान के प्रसाद को पा लेता है ।''

१३ फरवरी (दोप.) को **पोखर बुजुर्ग, जि. खरगोन (म.प्र.)** में सत्संग-वर्षा के बाद **१४ फरवरी (दोप.)** को **सेंधवा, जि. बड़वानी (म.प्र.)** में बापूजी के सान्निध्य में सत्संग-आयोजन हुआ । साथ ही यहाँ मातृ-पितृ पूजन दिवस के अवसर पर श्री नारायण साँईंजी द्वारा पूज्य बापूजी का पूजन कर सम्पूर्ण विश्व को माता-पिता के पूजन की प्रेरणा दी गयी ।

१४ फरवरी (दोप.) को ही **अमलनेर (महा.)** वासियों ने पूज्यश्री की सत्संग-ज्ञानगंगा में डुबकी लगायी ।

१७ से **२० फरवरी** तक **महाशिवरात्रि महोत्सव** पर **नासिक (महा.)** के कुम्भ मेला परिसर में चार दिवसीय ध्यान-योग शिविर ने महाकुम्भ की याद ताजा कर दी । प्रथम दो दिन विद्यार्थी विशेष सत्र में विद्यार्थियों ने जीवन के सर्वांगीण विकास के सूत्र सीखे । फिर साधकों ने ध्यान की गहराइयों में गोता लगाया । महाशिवरात्रि की रात को बापूजी के पावन सान्निध्य में जप किया, साथ-ही-साथ ध्यान से मन को तथा बापूजी की पिचकारी से निकले रंग से अपने तन को रँगा । नासिक में महाशिवरात्रि से ही होली रंगोत्सव पर्व की शुरुआत हो गयी । पूज्यश्री यहाँ शिव मंदिर का तात्त्विक अर्थ बताते हुए बोले : ''शिव मंदिर में आप जायेंगे तो पहले नंदी के दर्शन होंगे । नंदी धर्म का स्वरूप है, यह शरीर धर्मयुक्त होना चाहिए । नंदी की नजर शिवजी पर है, ऐसे ही तुम्हारे स्थूल कर्मों और हिलचाल की नजर आत्मशिव पर होनी चाहिए । फिर नंदी और शिवजी के बीच में कछुआ चलता है लेकिन शिवजी की तरफ ही देखता है, ऐसे ही मनरूपी कछुआ कुछ भी इधर-उधर होवे किंतु गहराई में सबके अंदर परमात्मशिव का दर्शन करे । फिर आगे जाओगे तो गणेशजी और हनुमानजी की परीक्षा से पास होकर जाना पड़ता है । गणेशजी के हाथ में दंड भी है अर्थात् धूर्तता से अंदर घुसोगे तो डंडा दिखायेंगे और सद्‌गुण साथ होंगे तो गणेशजी आपको मधुर स्नेह देंगे । फिर शिवजी के मंदिर में जाओगे न, तो चौखट ऊँची होती है और मंदिर का दरवाजा नपा-तुला होता है । इसमें ऐसी व्यवस्था है कि आप इन परीक्षाओं से पास होकर आये हैं तो 'मैं कुछ विशेष हूँ' नहीं, फिर और नम्र होना है ।''

२४ फरवरी को **अकोला (महा.)** तथा **२५ व २६ फरवरी (दोप.) तक शेगाँव (महा.)** में बापूजी की ज्ञानगंगा बही । ❑

पूज्य बापूजी के आगामी सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक : २८ व २९ फरवरी
स्थान : अमरावती (महा.)

दिनांक : १ व २ मार्च (होली महोत्सव)
स्थान : रेशीमबाग मैदान, नागपुर (महा.)
सम्पर्क : ०७१२-२६६७२६८, ९८९०४ ४५५१७, ९४२३५१२४२०.

दिनांक : ३ व ४ मार्च (होली महोत्सव)
स्थान : बांद्रा-कुर्ला कॉम्प्लेक्स, बांद्रा (पूर्व) (महा.)
सम्पर्क : ९८२१०१६२१४, ९८६७३ ५०२८५, ९३२३६८३६६८.

दिनांक : ५ व ६ मार्च (होली महोत्सव व पूर्णिमा दर्शन)
स्थान : जापानी पार्क, सेक्टर-१०, रोहिणी, दिल्ली
सम्पर्क : ९६५०९९३७२८, ९८१११९८५९४, ९३१०४६२८२३.

दिनांक : ७ व ८ मार्च (होली महोत्सव व पूर्णिमा दर्शन)
स्थान : संत श्री आशारामजी आश्रम, जहाँगीरपुरा, सूरत (गुज.)
सम्पर्क : (०२६१)२७७२२०१-०२.